# शैक्षिक मंथन

( द्विभाषी मासिक )

*शैक्षिक क्षेत्र की प्रतिनिधि पत्रिका*

वर्ष : 9 अंक : 8 1 मार्च, 2017

( फाल्गुन-चैत्र, विक्रम संवत् 2073-74 )



संरक्षक
**मुकुन्द कुलकर्णी ❑ के.नरहरि**

❖

परामर्श
**डॉ. विमल प्रसाद अग्रवाल**
**जगदीश प्रसाद सिंघल**

❖

सम्पादक
**सन्तोष पाण्डेय**

❖

सह सम्पादक
**विष्णुप्रसाद चतुर्वेदी ❑ भरत शर्मा**

❖

संपादक मंडल
**प्रो. नन्दकिशोर पाण्डेय**
**डॉ. नाथू लाल सुमन**
**डॉ. एस.पी. सिंह**
**डॉ. ओमप्रकाश पारीक**

❖

प्रबन्ध सम्पादक
**महेन्द्र कपूर**

❖

व्यवस्थापक
**बजरंग प्रसाद मजेजी**

प्रेषण प्रभारी
**बसन्त जिन्दल ❑ नौरंग सहाय भारतीय**
कार्यालय प्रभारी
**आलोक चतुर्वेदी : 9782873467**



प्रकाशकीय कार्यालय
**82, पटेल कॉलोनी, सरदार पटेल मार्ग,**
**जयपुर ( राज. ) 302001**
**दूरभाष : 9414040403**

दिल्ली ब्यूरो :
**शैक्षिक महासंघ सदन, 606/13,**
**कृष्णा गली नं.9, मौजपुर, दिल्ली-110053**
**दूरभाष : 011-22914799**

**E-mail :**
shaikshikmanthan@gmail.com
**Visit us at :**
www.shaikshikmanthan.com

**एक प्रति 20/- वार्षिक शुल्क 200/-**
**आजीवन ( दस वर्ष ) 1500/-**

**पृष्ठ संयोजन : सागर कम्प्यूटर, जयपुर**



**शैक्षिक मंथन मासिक**
**में प्रकाशित सामग्री से संपादक मण्डल**
**का सहमत होना आवश्यक नहीं है।**


## शिक्षा का विकास यानि विकास की दीक्षा ❑ प्रो. मधुर मोहन रंगा

**क्या कभी किसी ने विचार किया है कि देश में विभिन्न प्रकार के शैक्षिक स्तरों के कारण बालक के मनोविज्ञान पर क्या प्रभाव पड़ेगा? एक तरफ अधिक वित्त पोषण व सुविधाएँ व दूसरी तरफ वित्त का अभाव व न्यूनतम आधारभूत सुविधाओं की कमी। इस प्रकार दोहरे मापदण्ड क्या शिक्षा के विकास या विकास की शिक्षा के लिए उचित हैं? मनोवैज्ञानिक विश्लेषण यह बताता है कि सुविधायुक्त कार्यस्थल वातावरण के कारण अधिगम पर तो प्रभाव पड़ता ही है, परंतु कम सुविधायुक्त कार्यस्थल वातावरण के कारण बालक के मन में कुण्ठा का भाव पैदा होता है। इस कारण उनमें दीन-भावना का उदय करेगा। इससे Have व have not की विचारधारा का जन्म होगा। जो शैक्षिक उन्नयन व राष्ट्रीय प्रगति के लिए उचित नहीं है।**

6

## अनुक्रम


| | | |
|---|---|---|
| 4. | शिक्षा का विकास व विकास की शिक्षा | - सन्तोष पाण्डेय |
| 9. | सर्वजन सुखाय विकास | - विष्णुप्रसाद चतुर्वेदी |
| 11. | शिक्षा का विकास और विकास के लिए शिक्षा | - प्रकाश चन्द्र अग्रवाल |
| 14. | शिक्षा से उद्यमिता विकास | - डॉ. रेखा भट्ट |
| 16. | राष्ट्रीय विकास के मूल्यांकन का आधार - शिक्षा | - बजरंग प्रसाद मजेजी |
| 18. | उच्च शिक्षा : दशा और दिशा | - डॉ. बुद्धमति यादव |
| 24. | Developing Education and Educating ... | - Prof. TS Girishkumar |
| 27. | Education and Development Process | - Dr. A. K. Gupta |
| 29. | शिक्षण का पैमाना | - जगमोहन सिंह राजपूत |
| 31. | आर्यभट : महान खगोलीय प्रतिभा | - प्रदीप |
| 34. | जब तक खुद का ध्यान रहेगा | - सुरेन्द्र डी. सोनी |
| 36. | Education in IITs in Today's | - Prof. C.V. R. Murty |
| 39. | नवाचार | |
| 40. | शैक्षिक समाचार | |
| 41. | गतिविधि | |


## India Needs World Class Nationalist Universities

**❑ Bhagwati Prakash Sharma**

**Another major lacuna in our education is that it is devoid of any focus on ingraining ethics and values in the conduct and behavior of the passing out graduates from the higher education. Patriotic and nationalistic fervor is also altogether absent in most of the educational endeavors. Several Universities have become breeding grounds for separatist ideologies of new global left, lacking a bold focus upon nationalistic inclination and engagement.**

20

# शिक्षा का विकास व विकास की शिक्षा

❑ सन्तोष पाण्डेय

संपादकीय

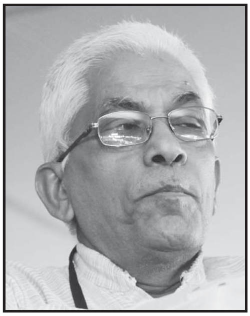

**भारतीय जीवन दृष्टि में शिक्षा को अतुलनीय सेवा माना गया है व इसे सबसे बड़ा दान माना गया है। यह वह दान है जो देने से घटने के स्थान पर बढ़ता है। सभी को ज्ञान के भण्डार से परिचित कराना इसका सामाजिक उद्देश्य रहा है। स्वतंत्रता से पूर्व जो आधुनिक शिक्षा पद्धति विकसित हुई है, वह पूर्णत: पश्चिमी जीवनदर्शन पर आधारित है, जिसमें व्यक्तिगत उपलब्धियों व प्रतियोगिता पर बल दिया जाता है। भारत में भी आर्थिक विकास को तीव्रता प्रदान करने के ध्येय से अपनाये गये वैश्वीकरण व उदारीकरण की लक्ष्य प्राप्ति की दिशा में शिक्षा प्रभावित हुई है। सभी को सभी प्रकार की शिक्षा सुलभ कराने में सरकारें समुचित धन व्यवस्था के अभाव के नाम पर निजी उद्यम को प्रोत्साहित किया गया है। स्पष्ट परिणाम है कि शिक्षा का सभी दिशाओं में प्रसार तो हुआ परन्तु प्राथमिक ध्येय 'मनुष्य निर्माण व सभी को सस्ती शिक्षा की सुलभता समाप्त हो गया है।'**

विकास व शिक्षा का गहरा संबंध है। शिक्षा के माध्यम से ही विकास के मार्ग खुलते हैं। ज्ञान के रूप में मनुष्य के अनुभवों व समस्याओं को सुलझाने के प्रयासों के निष्कर्षों का पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तान्तरित होने का संचयी भंडार है। इसे एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुँचाने का कार्य ही शिक्षा है, यही उस देश, समाज व भूभाग की संस्कृति है। संचयी ज्ञान को व्यावहारिक रूप देना ही उस संस्कृति की मूल्य व्यवस्था है। प्रत्येक समाज संचयी ज्ञान के आधार पर ही शिक्षा के स्वरूप व शिक्षा व्यवस्था को निर्मित करता है। ज्ञान शिक्षा का आधार है। लिपि इसे स्थूल स्वरूप प्रदान करती हैं। एक ओर मनुष्य के ज्ञान के भंडार में होने वाली प्रत्येक वृद्धि, शिक्षा को विकसित करने में योग देती है, तो दूसरी ओर शिक्षा के विकास से हो मनुष्य व समाज ज्ञान की सृजनशीलता बढ़ती है। इतिहास साक्षी है कि शिक्षा का विकास, संबंधित समाज की जीवन दृष्टि व विश्व दृष्टि से जुड़ा होता है। जीवन व विश्व दृष्टि संपूर्ण ब्रह्माण्ड प्रकृति, देश, समाज को किस दृष्टि से देखा जाय से संबंधित होती है। संपूर्ण जगत को एकाकार या एकात्म दृष्टि से देखा जाय अथवा खण्ड-खण्ड रूप में वैयक्तिक इकाइयों के रूप में देखा जाय, यह संबंधित समाज या भू-भाग के जीवन दर्शन को प्रकट करता है। यह जीवन दर्शन शिक्षा के स्वरूप व विकास को प्रभावित करता है। पूर्वी व पश्चिमी देशों में शिक्षा के विकास क्रम में इसे स्पष्टत: रेखांकित किया जा सकता है। पूर्वी संस्कृति जिसका प्रतिनिधित्व भारतीय संस्कृति करती है, संपूर्ण विश्व ब्रह्माण्ड व प्रकृति को एकात्म इकाई मानकर उसकी सर्वोच्चता को स्वीकार करते हुये सामाजिक-सांस्कृतिक जीवन का निर्माण करती है। यह प्रकृति की सर्वोच्चता को स्वीकार करते हुये ही प्रकृति पर विजय के स्थान पर सहयोग तथा प्रकृति से उतना ही लेने जितना कि वह प्रकृति को वापस लौटा सके पर बल देती है। संपूर्ण शिक्षा पद्धति में यह परिलक्षित होता है। प्रकृति की निकटता व सहयोगवृत्ति का ही परिणाम रहा कि यहाँ गुरुकुल व्यवस्था विकसित हुई। गुरुकूल व्यवस्था ने ही अनेक ऋषि, मुनि, विचारक, प्रेरक, वैज्ञानिक दृष्टि से परिपूर्ण दार्शनिक, वैज्ञानिक, समाज निर्माताओं का निर्माण किया। भारत का अक्षय अटूट ज्ञान भण्डार इसका साक्षी है। यह ज्ञान का भण्डार वेद, पुराण व अन्य अनेक धार्मिक उपनिषद् साहित्य के रूप में विद्यमान है। यह भारतीय ज्ञान परम्परा ही है, जिसने विश्व को अनेक ज्ञान व वैज्ञानिक उपलब्धियों का उपहार दिया। अन्तरिक्ष (खगोलशास्त्र) से लेकर चिकित्सा, योग, नीति, न्याय, उच्च सामाजिक व्यवहार मानदण्ड व सर्वे भवन्तु सुखीना: की जीवन दृष्टि दी। यह भारतीय शिक्षा का विकास है जो हजारों वर्षों में विकसित हुआ और जो आज भी प्रासंगिक है। आज अध्यात्म के प्रति वैश्विक झुकाव इसका प्रमाण है।

इसके विपरित पाश्चात्य जीवन दर्शन आधारित संस्कृति व शिक्षा है, जो मनुष्य की सर्वोच्चता में विश्वास करती है। जो प्रकृति को मनुष्य के भौतिक सुख प्राप्ति का स्रोत मानती है। इसी जीवन दृष्टि के आधार पर प्रकृति पर विजय व नियंत्रण का स्वप्न देखती है। पश्चिमी संस्कृति का ज्ञान भण्डार प्रकृति पर विजय व नियंत्रण की व्यक्तिगत सफलताओं, अनुभवों व भौतिक समस्याओं के समाधान से उत्पन्न अनुभवों का संचय है। इससे भौतिकतावादी सभ्यता व संस्कृति विकसित हुई। सामूहिकता व सहजीवन का स्थान वैयक्तिक सफलता व उपलब्धियों में प्रकट होती है। समाज में भावनाओं के स्थान पर तर्क (Reasoning) की प्रधानता रहती है। समाज में पारस्परिक निर्भरता व सहयोग का स्थान वैयक्तिक स्वतंत्रता ले लेती है। व्यक्ति के केन्द्र स्थान में होने के कारण ही आर्थिक विचारों में व्यक्तिगत स्वतंत्रता, उद्यम व प्रतियोगिता की प्रधानता रही व आर्थिक व्यवस्था का निर्माण पूँजीवाद के रूप में हुआ। वैज्ञानिक आविष्कारों के औद्योगिक उपयोग ने नये प्रकार के समाज की रचना की। इन सभी से शिक्षा के विकास को नई दिशा मिली। शैक्षिक सफलता भी आर्थिक सफलता का भाग बन गई। यूरोप व अमरीका में शिक्षा का विकास भी वैज्ञानिक व आर्थिक सफलताओं में मापा जाने लगा।

आर्थिक विचारों में भी परिवर्तन दृष्टिगोचर हुये। स्वतंत्र उद्यम वाली पूँजीवादी व्यवस्था के छिद्र सामने आने पर साम्यवाद, मार्क्सवाद सामने आया। इनके द्वन्द्व में ही कल्याणकारी राज्य की अवधारणा के मूल में सामूहिकता, सहयोग व सहजीवन की कल्पना निहित है। जो पूर्वी संस्कृति को ध्वनित करता है। इस सम्पूर्ण सामाजिक-सांस्कृतिक समाज रचना के मूल में व्यक्ति ही बना रहा। शिक्षा के विकास में भी ये ही अवधारणा प्रभावी रही। शिक्षा की विशिष्ट पद्धतियाँ विकसित हुई जिनमें वैयक्तिक सफलताओं व उपलब्धियों की प्रधानता रही। सभी का मापन आर्थिक सफलता से किया गया। आज संपूर्ण देश की आर्थिक प्रगति व उपलब्धियों का मापन सकल राष्ट्रीय उत्पाद के रूप में किया जाता है। सकल राष्ट्रीय उत्पाद, सकल राष्ट्रीय आय व प्रति व्यक्ति में निरन्तर अभिवृद्धि को ही विकास माना जाता है। शिक्षा के विकास की सफलता भी इसके सकल राष्ट्रीय आय में योग से निर्धारित होती है। सकल राष्ट्रीय उत्पाद में वृद्धि को व्यक्ति व समाज के कल्याण से जोड़ा जाता है, जो अधिकतम उत्पादन द्वारा सकल राष्ट्रीय उपभोग व समाज में अधिकतम संतुष्टि की धारणा के रूप में प्रकट होता है। परन्तु इस संपूर्ण व्यवस्था का खोखलापन आज के यूरोप व अमरीका में बढ़ते सामाजिक असन्तोष, एकाकीपन, अवसाद के रूप में प्रकट हो रहा है। यह इस बात का संकेतक है कि अधिकतम संतुष्टि सुखी जीवन का पर्याय नहीं हो सकती है। इसमें कहीं न कहीं प्रकृति के साथ सहयोग, प्राकृतिक संसाधनों के पुन: चक्रण व अध्यात्म की कमी अनुभव की जा रही है। आवश्यकता ऐसे आर्थिक प्रतिमान निर्धारित करने की है, जिनमें भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों व संस्कारों का समावेश हो। सुप्रसिद्ध अर्थशास्त्री डॉ. बजरंग लाल गुप्त ने 'सुमंगलम्' के विचार द्वारा इसे प्रतिपादित किया है। शिक्षा का विकास भी ऐसी दिशाओं में होना चाहिये, जिसमें व्यक्तिगत उपलब्धियाँ तो हों परन्तु प्रतियोगिता के स्थान पर सहयोग व सुखी जीवन निर्माण, मनुष्य निर्माण व चरित्र निर्माण के अवयव सम्मिलित हों।

भारत में शिक्षा क्षेत्र की उपलब्धियों की सहस्त्रों वर्षों की परंपरा रही है। भारतीय शिक्षा के विकास को समझने के लिये भारत की आत्मा को समझना आवश्यक है तथा इसको मापने का मापदण्ड भी भारत की आत्मा जो भौतिक उन्नति के साथ-साथ आध्यात्मिक अनुभूति पर आधारित है के अनुरूप होने चाहिये। भारत में शिक्षा का विकास 'मानव के निर्माण' में निहित है। वह शिक्षा जो मात्र प्रतियोगिता पर आधारित सफलताओं पर निर्भर हो अधूरी है। परन्तु परिस्थितियोंवश भारतीय शिक्षा में मनुष्य निर्माण का अभीष्ट पीछे छूटता जा रहा है। मनुष्य निर्माण की अवधारणा चरित्र निर्माण, कर्तव्य पालन, शाश्वत जीवन मूल्यों व सांस्कृतिक नैतिक मूल्यों का संस्कारों के निर्माण के माध्यम से व्यक्ति के व्यक्तित्व में समाहित करने पर आधारित है। परन्तु क्या विकास के उद्देश्य से परिपूर्ण शिक्षा इस उद्देश्य को पूरा कर पा रही है? संदेहजनक है। स्वतंत्रता के पश्चात् भारत में शिक्षा का प्रसार तीव्र गति से करने के प्रयास अनवरत किये जा रहे हैं। नि:संदेह शिक्षा का प्रसार सभी क्षेत्रों में हुआ है प्राथमिक शिक्षा का लाभ लगभग सभी को प्राप्त होने लगा है। शिक्षा के अधिकार, सर्व शिक्षा अभियान व मध्याह्न भोजन योजना ने सभी को प्राथमिक शिक्षा सुलभ बनाने में योग दिया है। माध्यमिक शिक्षा का प्रसार भी व्यापक रूप में हुआ है। उच्च शिक्षा का न केवल प्रसार हुआ है वरन् वह बहुआयामी व बहुविधायी हुई है। संख्यात्मक रूप से शिक्षा की सुलभता बढ़ी है, गुणात्मक रूप से शिक्षा में बहुत कुछ करना शेष है। प्राथमिक शिक्षा में सीखने की क्षमता (Learning Level) में तीव्र गिरावट आयी है। संभवत: सभी को प्राथमिक शिक्षा के लक्ष्य प्राप्ति की दिशा में कार्य करते करते गुणात्मक शिक्षा का पक्ष पृष्ठभूमि में चला गया लगता है। माध्यमिक शिक्षा भी छात्र के भावी जीवन की दिशा निर्धारण में योग नहीं दे पा रही है? भारतीय शिक्षा प्राचीन काल से ही मुख्य ध्येय मनुष्य निर्माण का रहा है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् शिक्षा के लिये गठित सभी आयोगों, समितियों, विशेषज्ञ दलों व शिक्षाविदों की अनुशंषा रही है कि शिक्षा में नैतिक शिक्षा प्रदान की जाए। पाठ्यक्रमों व पाठ्यपुस्तकों में जीवन के शाश्वत मूल्यों का समावेश किया जाय, जिससे शिक्षा ग्रहण करने वाला व्यक्ति भारतीय संस्कृति व संस्कारों में दीक्षित हो सके। शिक्षा के विकासक्रम में इस उपलब्धि को पाना अभी शेष है जो समय की आवश्यकता है। भारतीय जीवन दृष्टि में शिक्षा को अतुलनीय सेवा माना गया है व इसे सबसे बड़ा दान माना गया है। यह वह दान है जो देने से घटने के स्थान पर बढ़ता है। सभी को ज्ञान के भण्डार से परिचित कराना इसका सामाजिक उद्देश्य रहा है। स्वतंत्रता से पूर्व जो आधुनिक शिक्षा पद्धति विकसित हुई है, वह पूर्णत: पश्चिमी जीवनदर्शन पर आधारित है, जिसमें व्यक्तिगत उपलब्धियों व प्रतियोगिता पर बल दिया जाता है। भारत में भी आर्थिक विकास को तीव्रता प्रदान करने के ध्येय से अपनाये गये वैश्वीकरण व उदारीकरण की लक्ष्य प्राप्ति की दिशा में शिक्षा प्रभावित हुई है। सभी को सभी प्रकार की शिक्षा सुलभ कराने में सरकारें समुचित धन व्यवस्था के अभाव के नाम पर निजी उद्यम को प्रोत्साहित किया गया है। स्पष्ट परिणाम है कि शिक्षा का सभी दिशाओं में प्रसार तो हुआ परन्तु प्राथमिक ध्येय 'मनुष्य निर्माण व सभी को सस्ती शिक्षा की सुलभता समाप्त हो गया है।' सेवा भाव का स्थान व्यक्तिगत सफलता व अधिकाधिक आर्थिक लाभ की प्राप्ति प्राथमिक हो गया है।

इससे समाज बुरी तरह प्रभावित हो रहा है। भारत आर्थिक भौतिक सुविधाओं की दृष्टि से अनेक भारत 'इंडिया, भारत व हिन्दुस्तान' के रूप में प्रकट हो रहा है। उपासना पद्धति, क्षेत्र, जाति जैसी सामाजिक बुराइयाँ तो दूर न हो सकी बल्कि नयी सामाजिक विभेदकारी प्रवृत्ति उठ खड़ी हुई है। ऐसी शिक्षा क्या परम वैभवशाली भारत की संकल्पना को साकार कर सकेगी? ❑

क्या कभी किसी ने विचार किया है कि देश में विभिन्न प्रकार के शैक्षिक स्तरों के कारण बालक के मनोविज्ञान पर क्या प्रभाव पड़ेगा? एक तरफ अधिक वित्त पोषण व सुविधाएँ व दूसरी तरफ वित्त का अभाव व न्यूनतम आधारभूत सुविधाओं की कमी। इस प्रकार दोहरे मापदण्ड क्या शिक्षा के विकास या विकास की शिक्षा के लिए उचित हैं? मनोवैज्ञानिक विश्लेषण यह बताता है कि सुविधायुक्त कार्यस्थल वातावरण के कारण अधिगम पर तो प्रभाव पड़ता ही है, परंतु कम सुविधायुक्त कार्यस्थल वातावरण के कारण बालक के मन में कुण्ठा का भाव पैदा होता है। इस कारण उनमें दीन-भावना का उदय करेगा। इससे Have व have not की विचारधारा का जन्म होगा। जो शैक्षिक उन्नयन व राष्ट्रीय प्रगति के लिए उचित नहीं है।

# शिक्षा का विकास यानि विकास की दीक्षा

❑ प्रो. मधुर मोहन रंगा

सम्पूर्ण विश्व में आज विकास की अवधारणा व विकास के प्रकार पर चर्चा होना स्वाभाविक है, क्योंकि परिवर्तित होते वैश्विक परिदृश्य में इस विषय पर चितंन व मनन आवश्यक हो जाता है। विकास की विभिन्न परिभाषाएँ समय-समय पर गढ़ी गयी हैं वैसे भी आजकल दो प्रकार का चिंतन प्रचलित है। एक पाश्चात्य संस्कृति से पोषित विकास का ढाँचा व दूसरा भारतीय चिंतन को आधार मान कर वैश्विक विकास को समग्र कल्याण से जोड़कर विचार करना। यदि हम भौतिक विकास को ही आधार मान कर विकास के सिद्धान्तों पर चिंतन करें, तो आज जो पर्यावरण क्षतिग्रस्त हो रहा है, उसके मूल में वही पाश्चात्य चिंतन है। आज सम्पूर्ण विश्व का चिंतन कर समग्र कल्याण की बात करें तो विकास का भारतीय चिंतन उचित प्रतीत होता है। अत: विकास के भारतीय चिंतन पर हम विचार करें, जिसका केन्द्र-बिन्दु व्यक्ति, समाज, राष्ट्र व विश्व होता है। परंतु समग्र विकास के मूल में अर्थ व्यवस्था रहती है, उसके साथ-साथ सामाजिक, शैक्षिक, वैज्ञानिक व आध्यात्मिक पक्ष भी रहते हैं। उपरोक्त सभी पक्षों के लिए आधारभूत संरचना के मूल में शैक्षिक उन्नयन है। इस नाते आर्थिक दृष्टि से समग्र विकास के संकल्प को साकार करने के लिए विकास की भारतीय अवधारणा पर चिंतन-मनन करना आवश्यक है। भारतीय चिंतन में एकात्म चिंतन (Integrated thinking) पर बल देते हुए मनुष्य को एक भौतिक, बौद्धिक व आध्यात्मिक प्राणी माना गया है। शिक्षा भी इसी प्रकार का संदेश देते हुए ''पुरुषार्थ-चतुष्टय'' पर ध्यान आकर्षित करती हैं। समाज को एक संस्था के रूप में स्वीकार करते हुए यह स्पष्ट किया गया है कि व्यक्ति उसके अवयव हैं। ऐसी शिक्षा का विकास जिसका उद्देश्य लाभ आधारित न होकर सेवा ही हमारा धर्म है, के लक्ष्य को प्राप्त करना है। उपभोक्तावाद से इतर संयमित उपभोग आधारित प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग को प्रतिपादित किया गया है। समाज की कमजोर कड़ी का शोषण न हो बल्कि उनका अन्त्योदय हो। अधिकारों के साथ-साथ कर्त्तव्य की चेतना का विकास, प्रकृति, समाज व व्यक्ति में सद्भाव, सहयोग व समन्वय का अनवरत प्रवाह हो, जिससे सक्षम, सबल समाज का निर्माण हो। स्व-रोजगार केन्द्रित आर्थिक सिद्धान्त हो जिससे जनसंख्या

लाभांश का उपयोग देश के सकल घरेलू उत्पाद में हो सके। भारतीय चिंतक, अर्थशास्त्र को एडम स्मिथ की तरह केवल धन का विज्ञान ही स्वीकार नहीं करते बल्कि उनके अनुसार अर्थशास्त्र एक नैतिक अर्थ रचना का विज्ञान है। इसलिये अर्थशास्त्र को धर्मशास्त्र के नियमों व मर्यादाओं में रहना चाहिये, इसीमें समग्र कल्याण का भाव निहित है। जब इन नियमों का उल्लंघन होता है। तब समाज का सामाजिक तानाबाना प्रभावित होता है। विख्यात् आर्थिक चिंतक दत्तोपंत ठेंगड़ी ने भारतीय चिंतन को श्रेष्ठ बताते हुए वैश्विक कल्याण के विकास का आधार भारतीय विकास की अवधारणा को ही बताया। आज विश्व के प्रमुख विचारक नैतिक व मानवीय मूल्यों से युक्त वैकल्पिक अर्थरचना की आवश्यकता का अनुभव करने लगे हैं। इस कारण उनका आकर्षण भारतीय चिंतन की ओर हो रहा है। पाल एम. हेनरी के अनुसार नयी विश्व रचना का उदय एक नैतिक-राजनैतिक सुमेल (Ethico-Political Negotiation) के द्वारा ही संभव है। विकास की भारतीय अवधारणा को पुष्ट करते हुए यूनेस्को द्वारा प्रकाशित पुस्तक 'संस्कृति, समाज व नवीन विश्व के लिए अर्थव्यवस्था' में लिखा गया है कि वैश्विक परिदृश्य में नये दृष्टिकोण को अपनाने की आवश्यकता है। विकास की भारतीय अवधारणा तभी साकार होगी जब शिक्षा के मूलभूत उद्देश्य पूरे होंगे, शिक्षा के विकास से तभी विकास की शिक्षा होगी जब मूल में शिक्षा ही होगी। स्वाधीनता के बाद देश में उच्च शिक्षा के उन्नयन के उद्देश्य को लेकर विभिन्न आयोगों का गठन हुआ, जैसे- 1948-49, 1953, 1964-66, 1968 (1992 में संशोधन), राष्ट्रीय ज्ञान आयोग व 21 मार्च, 2015 को नई शिक्षा नीति के सन्दर्भ में एक बैठक का आयोजन किया गया व 33 सूत्रीय कार्य बिन्दुओं पर विचार किया गया। भारत में पंचवर्षीय योजनाओं का प्रारंभ सन् 1951 में हुआ। यद्यपि योजनाओं में विभिन्न क्षेत्रों के विकास का वर्णन आता है, क्योंकि भारत की अर्थव्यवस्था का एक बड़ा भाग योजना आयोग द्वारा विकसित, क्रियान्वित व इसकी देख-रेख में चलने वाली योजनाओं पर आधारित होता है। परंतु प्रत्येक योजना का केन्द्र-बिन्दु शैक्षिक विकास ही होता है। प्रथम पंचवर्षीय योजना (1951-1956) से ही शिक्षा को कौशल एवं दक्षता वृद्धिकारक मानते हुए नीतिगत विकास हेतु महत्त्वपूर्ण निवेश माना गया। इसी योजना में प्राथमिक शिक्षा के सर्वव्यापीकरण, तीसरी व चौथी योजना में सकल नामांकन दर व पंजीकृत शिक्षा संस्थाओं की वृद्धि पर ध्यान दिया गया। छठवीं पंचवर्षीय योजना (1980-1985) में शिक्षा को व्यावहारिक बनाने, के साथ-साथ रोजगार एवं विकास के बीच समन्वय स्थापित करना था। सातवीं योजना (1985-1990) में विज्ञान व गणित की शिक्षा पर विशेष बल देकर उसका सर्वसामान्यीकरण करने का उद्देश्य रखा गया। नौवीं पंचवर्षीय योजना (1997-2002) में लैंगिक असमानताएँ एवं ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्रों में शिक्षा स्तर में पर्याप्त निवेश कर ध्यान दिया गया। दसवीं पंचवर्षीय योजना (2002-2007) में सकल नामांकन दर में वृद्धि के साथ-साथ वित्त पोषण पर ध्यान दिया गया। मानव संसाधन मंत्रालय के अनुसार सर्वशिक्षा अभियान के सफलतापूर्वक लागू होने के बाद सन् 2007 में ग्यारहवीं योजना के अंतर्गत भारत सरकार ने केन्द्र द्वारा वित्त पोषित माध्यमिक शिक्षा अभियान प्रारम्भ किया। माध्यमिक शिक्षा के सर्वव्यापीकरण का लक्ष्य प्राप्त करने के लिए केन्द्र सरकार की यह उत्तम पहल रही। वर्ष 2017 तक सभी विद्यार्थियों को माध्यमिक शिक्षा की सुलभता सुनिश्चित करना है। बारहवीं योजना में सूचना प्रौद्योगिकी का अधिगम व शैक्षिक उन्नयन पर ध्यान देते हुए केन्द्र तथा राज्यों के बीच साझा खर्च 50:50 में परिवर्तित किया जायेगा। उत्तर-पूर्वी राज्यों के लिए केन्द्र व राज्यों में 90:10 के अनुपात में होगा।

शिक्षा में आई.सी.टी. के प्रयोग के लिए सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी द्वारा शिक्षा का राष्ट्रीय मिशन संचालित है, उसके अन्तर्गत साक्षात् नामक वेब आधारित शिक्षा पोर्टल बनाया गया है। राष्ट्रीय मिशन के तहत् देश के 25000 से अधिक महाविद्यालयों, 2000 पॉलिटेक्निक महाविद्यालयों, विश्वविद्यालयों एवं संस्थाओं में कम्प्यूटर का आधारभूत ढाँचा एवं इन्टरनेट-सम्पर्क स्थापित किया जा रहा है। वर्तमान में तकनीकी आधारित अधिगम हेतु नेशनल प्रोग्राम ऑन टेक्नालॉजी एनहान्सड लर्निंग प्रारम्भ किया गया है। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग देश के उच्चशिक्षा तंत्र में समानता, दक्षता व उत्कृष्टता लाने के लिए समय-समय पर विभिन्न दिशा-निर्देश जारी करता है। उसके अंतर्गत राष्ट्रीय मूल्यांकन एवं प्रत्यानयन परिषद् (नैक) द्वारा मूल्यांकन व विकल्प आधारित क्रेडिट व्यवस्था लागू करने के निर्देश दिये गये हैं। उच्चशिक्षा के अखिल भारतीय सर्वेक्षण (AISHE) भी प्रत्येक वर्ष विभिन्न विश्वविद्यालयों व महाविद्यालयों व शिक्षण संस्थाओं से विस्तृत आँकड़े एकत्रित कर केन्द्र सरकार को शैक्षिक उन्नयन के सुझाव देती है। इससे पूर्व विश्वविद्यालय आयोग व तकनीकी शिक्षा परिषद्, भारतीय चिकित्सा परिषद् व राष्ट्रीय विश्वविद्यालय- शिक्षा योजना व प्रशासन (National University of Education and Administration,2011) आदि संस्थाएँ सांख्यिकी आँकड़े एकत्रित करती थीं। अब एक ही संस्था यह संख्यात्मक विश्लेषण केन्द्र सरकार को प्रेषित करती है, जिससे सम्पूर्ण शैक्षिक उन्नयन के लिए दृष्टि पथ (Vision document) बन सके। भाषा पर ध्यान देते हुए

विश्वविद्यालय योजना आयोग ने 1983 में स्नातक स्तर पर फाउण्डेशन कोर्स के अंतर्गत हिन्दी व अंग्रेजी की अनिवार्यता पर ध्यान आकर्षित किया व सुझाव दिया कि विद्यार्थियों को देश के इतिहास, धरोहरों, भारतीय संविधान, स्वाधीनता आन्दोलन, वैज्ञानिक उपलब्धियों की जानकारी हो। इसके लिए भाषा का महत्त्व है। अत: भाषा की अनिवार्यता होगी तभी विद्यार्थियों को उपरोक्त वर्णित इतिहास की जानकारी होगी। इसके अंतर्गत मध्यप्रदेश सरकार ने 1986 में यूनीफाइड फाउण्डेशन कोर्स प्रारम्भ किया।

उच्च शिक्षा क्षेत्र के विकास हेतु किये प्रमुख प्रयास व नवाचार इस प्रकार है- सार्वजनिक निजी सहभागिता, राष्ट्रीय उच्चत्तर शिक्षा अभियान, तकनीकी शिक्षा में गुणवत्ता सुधार कार्यक्रम, शैक्षिक विनिमय कार्यक्रम व सहमति पथ, अल्पसंख्यकों पर राष्ट्रीय निगरानी समिति, अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति एवं नि:शक्तजन शिक्षा हेतु राष्ट्रीय निगरानी समिति, राष्ट्रीय सहयोग्यता छात्रवृति योजना, जम्मू-कश्मीर हेतु विशेष छात्रवृति योजना, शैक्षिक ऋण पर ब्याज उपदान योजना, भेदभाव निवारण एवं लोकपाल स्थापना हेतु विषम, छात्र उत्पीड़न रोधी वेब पोर्टल का विकास, सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी द्वारा शिक्षा पर राष्ट्रीय मिशन, नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा अधिनियम आदि। विभिन्न नवाचार व प्रयास शिक्षा के विकास हेतु प्रयत्न है। शिक्षा के समग्र विकास हेतु विभिन्न बिल लोक सभा में पारित होने की प्रत्याशा में है। उनके स्वीकार होने के बाद विकास की दिशा एवं शिक्षा के क्षेत्र में की निर्माण स्थापित हो सकेंगे। स्वाधीनता के बाद देश में शिक्षण संस्थाओं की संख्या बढ़ी है। विद्यार्थियों की सकल नामांकन दर भी बढ़ी है। देश में शैक्षिक उन्नयन के लिए लगातार प्रयास जारी है, श्रमसाध्य जनसंख्या के लिए देश के प्रत्येक राज्य में दूरस्थ शिक्षा विश्वविद्यालय है। वर्तमान में कुल 221 विश्वविद्यालय 5 मई 2015, के आँकड़ों के आधार पर हैं। हिन्दी व क्षेत्रीय भाषाओं के लिए भी हिन्दी ग्रंथ अकादमियाँ कार्यरत है। सम्पूर्ण देश के स्कूलों के कॅरिकुलम में 2018 से स्पोर्ट्स को शामिल किया गया है। मानव संसाधन विकास मंत्रालय ने ऑल इंडिया कांउसिल फॉर टेक्निकल एजुकेशन द्वारा दिए गए कॉमन इन्ट्रेंस टेस्ट के प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया है। इससे कपिटेशन फीस दर पर प्रभाव होगा। इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी, मद्रास में एम.एस.सी. व पीएच.डी. प्रोग्राम में प्रवेश प्रक्रिया वर्ष भर जारी रहेगी। वित्त पोषण के सन्दर्भ में मानव संसाधन विकास मंत्रालय के द्वारा गठित हायर एजुकेशन फाइनेंशियल एजेंसी, योजनागत व गैर-योजनागत मदों के अंतर्गत वित्त आवंटित करेगी, उम्मीद है कि इससे वित्त वितरण सुगमता से होगा। शिक्षा के विकास के साथ साक्षरता को जोड़ा जाना प्रासंगिक होगा। क्योंकि यह समाज के विकास का भी सूचकांक है। भारत में शिक्षा-विकास (IndiaNetzone, 04.09.2013) के अनुसार 2011 की जनगणना द्वारा प्रकाशित आँकड़ों के अनुसार भारत में साक्षरता 74 प्रतिशत है। उल्लेखनीय है कि भारत विश्व में तीसरा शिक्षा-प्रदाता देश है। संविधान संशोधन (68वाँ) के द्वारा शिक्षा के मौलिक अधिकार का दर्जा 6-14 आयु के बालकों के लिए प्रदान किया गया। यह साक्षरता वृद्धि का प्रमुख आधार है। राष्ट्रीय साक्षरता मिशन (1988) भी साक्षरता वृद्धि हेतु लगातार प्रयासरत है। उल्लेखनीय है कि यूनेस्को द्वारा 1981 में बिहार के वयस्क शिक्षा विभाग को साक्षरता वृद्धि हेतु रजक पदक प्रदान किया गया। उपरोक्त विवरण यह तो स्पष्ट करता है कि शिक्षा का अनवरत विकास हो रहा है। परंतु क्या उसका "विकास की शिक्षा" में कितना योगदान है। यह यक्ष प्रश्न आना स्वाभाविक है। शिक्षा की जब बात करते हैं तब यह विचार आना स्वाभाविक हो जाता है कि हमारे यहाँ विभिन्न प्रकार के शिक्षण संस्थाओं के स्तर है। जैसे केन्द्रीय विश्वविद्यालय, राज्य विश्वविद्यालय, स्वायत्त महाविद्यालय, डीम्ड विश्वविद्यालय, आदि इसी प्रकार राज्य शिक्षा बोर्ड व केन्द्रीय शिक्षा बोर्ड के अंतर्गत आने वाले स्कूल। सभी में वित्त पोषण व सुविधाओं में अपार-असमानता है। एक बालक जो राज्य बोर्ड या राज्य विश्वविद्यालय के अंतर्गत आने वाली शिक्षण संस्था में अध्ययन कर रहा है व दूसरा वह बालक जो केन्द्रीय बोर्ड भी विश्वविद्यालय के अंतर्गत आने वाली शिक्षण संस्थाओं में अध्ययन कर रहा है। दोनों जब समकक्ष आयेंगे तब उनके मन में कैसे-कैसे विचार आयेंगे यह चिंता का विषय है। क्या कभी किसी ने विचार किया है कि देश में विभिन्न प्रकार के शैक्षिक स्तरों के कारण बालक के मनोविज्ञान पर क्या प्रभाव पड़ेगा? एक तरफ अधिक वित्त पोषण व सुविधाएँ व दूसरी तरफ वित्त का अभाव व न्यूनतम आधारभूत सुविधाओं की कमी। इस प्रकार दोहरे मापदण्ड क्या शिक्षा के विकास या विकास की शिक्षा के लिए उचित हैं? मनोवैज्ञानिक विश्लेषण यह बताता है कि सुविधायुक्त कार्यस्थल वातावरण के कारण अधिगम पर तो प्रभाव पड़ता ही है, परंतु कम सुविधायुक्त कार्यस्थल वातावरण के कारण बालक के मन में कुण्ठा का भाव पैदा होता है।। इस कारण वह उनमें दीन-भावना का उदय करेगा। इससे Have व have not की विचारधारा का जन्म होगा। जो शैक्षिक उन्नयन व राष्ट्रीय प्रगति के लिए उचित नहीं है। अत: उपरोक्त विषय को ध्यान में रखकर नीति निर्माता किसी कार्ययोजना को साकार रूप देंगे। तभी सही दिशा में विकास की शिक्षा होगी। ❑

(विभागाध्यक्ष, पर्यावरण विज्ञान विभाग, सरगुजा वि.वि., अम्बिकापुर, छत्तीसगढ़)

# सर्वजन सुखाय विकास

परम्परागत जीवन जीने वाले निरक्षर भारतीय में पर्यावरण चेतना आधुनिक सुशिक्षित व्यक्ति से अधिक पाई जाती है। भोजन प्रारम्भ करने से पूर्व गौ ग्रास के रूप में जानवरों का हिस्सा निकालने को शिक्षित समाज ने रूढ़िवादिता कहकर ठुकरा दिया हो मगर गम्भीरता से देखें तो यह पर्यावरण चेतना को प्रमाणित करता है। जब तक प्रकृति को सम्मान दिया जाता रहा तब तक भारत में घी-दूध की नदियाँ बहती रही, देश सोने की चिड़िया कहलाता रहा, विश्व भारत का अनुसरण करता रहा। विकास के सनातन मार्ग को छोड़ कर हमने उपभोक्तावादी विकास को अपनाया तो देश गरीब होने के साथ ही अनेक परेशानियों से घिरता गया है। आज जब नई शिक्षा नीति बनाई जा रही है तब यह प्रश्न विचारणीय है कि सही विकास की शिक्षा कैसी हो?

❑ **विष्णुप्रसाद चतुर्वेदी**

आजकल चारों ओर विकास की गूंज है। हर राजनेता विकास के सपने दिखाकर अपनी सत्ता को बचाने या विरोधी को सत्ता से हटाने के प्रयास में लगा है। जनता भी विकास की आस में कभी एक को तो कभी दूसरे को सत्ता सौंपती रहती है। जनता के कष्ट समाप्त करने वाला विकास नहीं हो पाया है। देश की राजधानी दिल्ली को विकास की दौड़ में आगे माना जाता है मगर वहाँ रहने वालों को श्वास लेने के लिए शुद्ध वायु तक उपलब्ध नहीं है। यह विकास की गलत अवधारणा का ही परिणाम है।

विकास के अर्थ को लेकर मानव जितना भ्रमित आज है उतना शायद ही इतिहास के किसी अन्य काल में रहा होगा। विकास की मृग मरीचिका के पीछे दौड़ता मानव सुखी होने के बजाय अपनी व अपने बच्चों की परेशानियाँ बढ़ा रहा है। संयुक्त राष्ट्र द्वारा आयोजित वैश्विक प्रतिपालित विकास और विज्ञान विषय पर आयोजित संगोष्ठी में यह विचार उभरा था कि विकास के नाम पर हम अपने हिस्से का पर्यावरण तो चट कर गए, अब अपने बच्चों के हिस्से के पर्यावरण को खा रहे हैं। इस बात की पुष्टि इस तथ्य से होती है कि विश्व में वायु प्रदूषण के कारण प्रतिवर्ष जीवन खोने वाले 64 लाख बच्चों में 16 लाख भारतीय बच्चे होते हैं। आज शिक्षा को विकास का पर्याय मान लिया गया है ऐसे में यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि विकास की शिक्षा के नाम पर हम बच्चों को भ्रमित तो नहीं कर रहे।

दु:ख इस बात का है कि नासा जैसी अति आधुनिक संस्था जीव व धरती के आत्मिक सम्बन्धों को पृथ्वी पर जैव-विकास का कारण स्वीकार करने लगी है मगर हम 'माता भूमि पुत्रोऽहं पृथिव्या:' की सनातन संस्कृति को भूलते जा रहे हैं। बायोस्फेयर के रूप में सम्पूर्ण धरा को एक पारिस्थितिक इकाई (इकोसिस्टम) मानकर प्रतिपादित विकास की अवधारणा भारत में बहुत पहले ही प्रतिपादित की कर दी गई थी। ईशोपनिषद के प्रथम श्लोक में कहा गया है-

**ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्याञ्जगत्।**
**तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम्॥**

इस परिवर्तनशील जगत में जो कुछ भी चराचर पदार्थ दिखाई देता है, ईश्वर उन सब में व्याप्त है अत: उन सबका त्याग भाव से उपभोग करना चाहिए। ईश्वर नामक अज्ञात शक्ति के

माध्यम से सम्पूर्ण सृष्टि में अन्योनाश्रय स्वीकार करने को ही आजकल प्रतिपालित विकास (सस्टेनेबल डवलपमेन्ट) कहा जा रहा है।

भारतीय संस्कृति में प्रतिपालित विकास को पुस्तकों तक सीमित नहीं रख कर जीवन शैली बनाया गया है। पर्यावरण को पाठचर्या का भाग नहीं बनाकर पर्यावरण संरक्षण के संस्कार विकसित किए जाते रहे हैं। परम्परागत जीवन जीने वाले निरक्षर भारतीय में पर्यावरण चेतना आधुनिक सुशिक्षित व्यक्ति से अधिक पाई जाती है। भोजन प्रारम्भ करने से पूर्व गौ ग्रास के रूप में जानवरों का हिस्सा निकालने को शिक्षित समाज ने रूढ़िवादिता कहकर ठुकरा दिया हो मगर गम्भीरता से देखें तो यह पर्यावरण चेतना को प्रमाणित करता है। नियमित रूप पक्षियों के दाने पानी की चिन्ता करना तथा चींटी को भी बचाकर चलना भारतीय जीवन शैली का भाग रही है। उसके लिए कानून नहीं बनाने पड़ते थे। देव-वन की परम्परा को वन संरक्षण की प्रभावी विधि रही है। जब तक प्रकृति को सम्मान दिया जाता रहा तब तक भारत में घी-दूध की नदियाँ बहती रही, देश सोने की चिड़िया कहलाता रहा, विश्व भारत का अनुसरण कहलाता रहा, विकास के सनातन मार्ग को छोड़ कर हमने उपभोक्तावादी विकास को अपनाया तो देश गरीब होने के साथ ही अनेक परेशानियों से घिरता गया है। आज जब नई शिक्षा नीति बनाई जा रही है तब यह प्रश्न विचारणीय है कि सही विकास की शिक्षा कैसी हो ? पाठ पढ़ाने से कार्य नहीं चल सकता अभ्यास आवश्यक है। हमने पर्यावरण शिक्षा को पाठ्यक्रम का भाग बनाया। पर्यावरण शिक्षा पर्यावरण चेतना उत्पन्न करने के बजाय, प्रश्नों के उत्तर रट कर, परीक्षा पास करने तक सीमित रह गई। उसका कोई प्रत्यक्ष लाभ समाज को नहीं मिला। पहले परिवार व समाज से पर्यावरण संरक्षण के संस्कार मिल जाया करते थे। आज वे स्थितियाँ नहीं रही है। हमें शिशु शिक्षा के साथ ही पर्यावरण के संस्कार देने होंगे। पर्यावरण संरक्षण का न्यूनतम अधिगम स्तर तय करना होगा।

आज वैश्विकता का जमाना है, हमें विश्व के साथ चलना है। संयुक्त राष्ट्र ने सदस्य राष्ट्रों के लिए प्रतिपालित विकास (सस्टेनेबल डवलवमेन्ट) के लक्ष्य निर्धारित कर 2030 तक उन्हें पाने का लक्ष्य दिया है। सही शिक्षा नीति द्वारा ही उन्हें पाया जा सकता है। राजनैतिक चेतना उत्पन्न करने हेतु श्री हरीशचन्द्र मीणा की अध्यक्षता में एक संसदीय समिति कार्य कर रही है।

सकल घरेलू उत्पाद को ही विकास का पैमाना मानना उचित नहीं है। सकल घरेलू उत्पाद का सही वितरण आवश्यक है। प्राकृतिक संसाधनों पर सभी का समान अधिकार है। आधुनिक विज्ञान भी कहता है कि धन-बल के आधार पर किसी को भी प्राकृतिक संसाधनों का दुरुपयोग करने की अनुमति नहीं दी जा सकती। आय के स्थान पर खर्च पर ध्यान देने की आवश्यकता है। प्रसन्नता है कि सांसदों का ध्यान इस ओर जाने लगा है। सांसद रंजीता रंजन द्वारा संसदीय बिल प्रस्तुत कर शादी में पाँच लाख से अधिक खर्च करने वालों को दण्डित करने की माँग सही दिशा में एक कदम है। भारत में यह सोच परम्परागत रही है। व्यक्ति के खर्च को सामाजिक बंधनों से सीमित करने की क्षीण रेखाएँ कई जातियों में आज भी देखने को मिलती है। उपभोक्तावादी शिक्षा ने इन बातों को रूढ़िवादिता बता कर खारिज कर दिया हैं, कानून व शिक्षा का सहारे सनातन परम्पराओं को मजबूत करने की आवश्यकता है।

विकास के नाम पर मशीनीकरण करते समय सावधान रहने की आवश्यता है। महात्मा गाँधी द्वारा खादी को अपनाना भारत की अधिकाधिक जनसंख्या को रोजगार उपलब्ध कराना था। स्मार्ट सिटी की चर्चा के साथ ग्राम स्वराज्य की अवधारणा पर भी चिन्तन करने की आवश्यकता है। पश्चिम में मानव शक्ति कम होने के कारण मशीनीकरण उचित है मगर भारत में इससे भारी आर्थिक विषमता उत्पन्न हो गई है। शिक्षानीति में इस पर भी विचार करने की आवश्यकता है।

विकास के नाम पर सरकारी नीतियाँ भ्रमित सी लगती है। एक ओर प्रतिपालित विकास की बात की जाती है और दूसरी उपभोक्तावाद को प्रोत्साहित किया जाता है। स्वचालित वाहन व मोबाइल फोन के प्रसार को प्रोत्साहित करने के बजाय जनता की मूलभूत आवश्यकताओं पर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है। यदि ऐसा नहीं कर पाते तो स्टेफेन हाकिन्स की चेतावनी को ध्यान रख कर पृथ्वी को छोड़ कर अन्यत्र बसने की तैयारी कर लेनी चाहिए। ❑

(बाल एवं विज्ञान विषयक लेखक)

**विकास का मूलाधार शिक्षा है, सर्वांगीण विकास हेतु ऐसी शिक्षा की आवश्यकता है जिसके द्वारा शिक्षा पूर्ण कर नौकरी प्राप्त करने मात्र के एकांगी पक्ष को न देखा जाए वरन् व्यापक रूप से यह देखा जाये कि शिक्षा द्वारा समाज, राष्ट्र व विश्व का विकास किस प्रकार संभव है। बहुत से तथ्य हैं जिनको सब ज्ञानवान जानते हैं परन्तु आँख मूंदकर उनकी अनदेखी कर रहे हैं जिसके कारण विकास के नाम पर हम अपने संसाधनों को अन्धाधुन्ध नष्ट करते जा रहे हैं। धरती पर प्रदूषण बढ़ता जा रहा है, ओजोन परत के सुरक्षा कवच का क्षय देखने में आ रहा है। आज लापरवाही के चलते अनेक तरह की जानलेवा बीमारियाँ आम बीमारियाँ बन चुकी हैं।**

# शिक्षा का विकास और विकास के लिए शिक्षा

**❑ प्रकाश चन्द्र अग्रवाल**

''न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते'' गीता से ली गई इन पंक्तियों में ज्ञान को सर्वाधिक पवित्र माना गया है। भारतीय दृष्टिकोण में शिक्षा, विद्या व ज्ञान तीनों को समान अर्थ में लिया गया है तथा विद्या व ज्ञान को काफी महत्त्व प्रदान किया गया है। शिक्षा शब्द संस्कृत के शिक्ष धातु से बना है – 'शिक्ष शिक्षणे' जिसका अर्थ सीखना, अध्ययन करना, ज्ञानार्जन करना है।

ऋग्वेद के अनुसार शिक्षा वह है जो मनुष्य को आत्मविश्वासी व स्वार्थहीन बनाये। यजुर्वेद में कहा गया है 'विद्ययाऽमृतमश्नुते'– विद्या से अमरत्व की प्राप्ति होती है। कठोपनिषद्/विष्णुपुराण में विद्या को बन्धन से मुक्ति की ओर ले जाने का साधन– 'सा विद्या या विमुक्तये' बताया गया है। अमरकोश में शिक्षा को छः वेदांगों में से एक माना गया है। वेदान्त दार्शनिक शंकराचार्य के मत में 'शिक्षा स्वयं को जानना है।' स्वामी विवेकानन्द के मतानुसार शिक्षा मनुष्य में निहित दैवीपूर्णता का प्रत्यक्षीकरण है।

अंग्रेजी भाषा में एजूकेशन शब्द की उत्पत्ति दो शब्दों E+Duco से हुई है जिसका अर्थ है –आगे बढ़ाना, अन्दर से विकास करना अर्थात् शिक्षा का कार्य बालक की अन्तर्निहित शक्तियों या गुणों का बाहर की ओर सर्वांगीण विकास करना है।

बच्चा जन्म लेता है वह कोरे कागज के समान होता है। जैसे–जैसे शरीर में सुदृढ़ता आती है वह अपनी क्रियाओं द्वारा वातावरण में विद्यमान वस्तुओं को छूकर, महसूस कर, स्वाद लेकर वस्तुओं व वातावरण का ज्ञान प्राप्त करने लगता है। अनुभव द्वारा वह यह जान लेता है कि कुछ वस्तुओं से उसे दूर रहना है। उसमें अनेक आंतरिक प्रतिभाएँ छुपी होती हैं। शिक्षा का उद्देश्य बच्चे की इन्हीं अन्तर्निहित शक्तियों को बाहर निकालकर इनका विकास करना है। शिक्षा एक ऐसा वातावरण प्रदान करती है जो बच्चे के चिंतन व दृष्टिकोण को व्यवहार में परिवर्तन करने का काम करती है। परंतु यहाँ शिक्षा का कार्य समाप्त नहीं हो जाता है बल्कि वह बच्चा उम्र भर कुछ न कुछ नया सीखता रहता है व अनुभवों में वृद्धि करता है। हालांकि बालक की बुद्धि का विकास कुछ समय अन्तराल पश्चात् पूरा हो जाता है परंतु ज्ञान व अनुभव का

विकास होता रहता है। इन्हीं अनुभवों का उपयोग कर बालक अपने समाज व वातावरण के साथ अनुकूलन करने लगता है। शारीरिक विकास के साथ-साथ बौद्धिक विकास यथा संज्ञानात्मक व भावात्मक विकास भी होता है तथा सामाजिक परिवेश व अन्त:क्रिया से सामाजिक कौशलों का निर्माण तथा सांस्कृतिक व आध्यात्मिक विकास होता है।

बालक के इस भौतिक व अभौतिक विकास में शिक्षा का सतत् योगदान रहता है। बालक औपचारिक व अनौपचारिक माध्यमों से शिक्षा प्राप्त कर सकता है। औपचारिक माध्यम में विद्यालयी शिक्षा व अनौपचारिक माध्यम में घर-परिवार, समाज, सामाजिक मीडिया के साधन स्वयं के अनुभव व क्रियाकलापों द्वारा सृजित ज्ञान का समावेश किया जा सकता है। लेकिन दुर्भाग्य से शिक्षा का माध्यम मात्र विद्यालयी शिक्षा तक सीमित कर संकुचित दृष्टिकोण से ही लिया जा रहा है। मानव सभ्यता के साथ-साथ ज्ञान व जानकारियों का त्वरित विकास होकर एक विस्फोट हुआ है और विद्यार्थी के कोमल मन मस्तिष्क में उस ज्ञान व जानकारियों को भर देना ही विद्यालयों का कार्य मान लिया गया है। इस ज्ञान और जानकारियों से हमने अनेक शिक्षित तो पैदा कर दिये परन्तु उनमें कुशलता व गुणावगुण में अन्तर करने का अभाव रहा। कार्य की संस्कृति और शारीरिक श्रम को वो हेय समझने लगे और शिक्षित बेरोजगारों की एक फौज खड़ी हो गयी।

बचपन में पढ़ी हुई कहानी याद आती है जिसमें शिक्षा व्यवस्था का मखौल उड़ाया गया है। सिकन्दर ने पोरस से की थी लड़ाई तो मैं क्या करूँ अर्थात् शिक्षा व्यवस्था ऐसी होनी चाहिए जो कौशल व अनुभवों में वृद्धि करे, जो जीवन की समस्याओं को सुलझाने में मदद करे। जो देश हेतु कुशल नागरिक तैयार करे। शिक्षा बालक के विकास का माध्यम बनें न कि उसको शिक्षित होने के गर्व का एक संकुचित वातावरण तैयार करे। महात्मा गाँधी जी ने एक बार लकड़ी के कुछ सामान की मरम्मत हेतु कारीगरों को साक्षात्कार के लिए बुलाया, उसमें इंजीनियर की डिग्री लिया हुआ एक व्यक्ति था जिसे फर्नीचर से संबंधित सभी किताबी ज्ञान था। वह सोच रहा था चयन उसी का होगा परंतु फर्नीचर संबंधी मरम्मत व उसके निर्माण से संबंधित वास्तविक ज्ञान शून्य होने के कारण सफल न हो सका। आज की शिक्षा व्यवस्था इसी प्रकार के नागरिक पैदा कर रही है जो वास्तविकता के धरातल पर शून्य हैं। भारतवर्ष आध्यात्मिक संस्कृति का देश है, जहाँ बाल्यकाल से ही बच्चों की शिक्षा की सम्पूर्ण व्यवस्था की गौरवशाली परंपरा थी। गुरुकुल शिक्षा पद्धति में बालक की सभी क्षमताओं का विकास कर उन्हें जिम्मेदार, सुयोग्य, जीवट व सामाजिक संसाधन के प्रेरक स्रोत के रूप में विकसित किया जाता था परन्तु विदेशी आक्रमणकारियों और आक्रांताओं के क्रमिक व्यवधान से हुए सांस्कृतिक पराभव व अंग्रेजों की गुलामी ने हमारी पुरातन शिक्षा व्यवस्था को ध्वस्त कर दिया। लार्ड मैकाले की क्लर्क बनाने व अंग्रेजी पढ़े-लिखे अंग्रेज भक्त बनाने की नीति ने हमारी शिक्षा व्यवस्था को नया मोड़ दिया। समय के साथ-साथ शिक्षा व्यवस्था को सुधारने हेतु अंग्रेजों ने अनेक आयोगों यथा हन्टर आयोग, वुड का घोषणा पत्र, कर्जन के शिक्षा सुधार, हर्टांग समिति, सार्जेन्ट योजना इत्यादि द्वारा भारतीय शिक्षा व्यवस्था को नया रूप देने का प्रयास किया। अंग्रेज सरकार को भी यह महसूस हो गया था कि अब भारतीय शिक्षा व्यवस्था की अवलेहना व अनदेखी नहीं की जा सकती। भारतीय राष्ट्रभक्तों ने भी शिक्षा सुधार हेतु अपना योगदान दिया। बड़ौदा के नरेश सायाजीराव गायकवाड़ ने अनेक प्राथमिक विद्यालयों का निर्माण करवाया व अनिवार्य नि:शुल्क प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था की। गोपाल कृष्ण गोखले, जो नरम दल से जुड़े थे, उन्होंने 19 मार्च 1910 को इम्पीरियल लेजिस्लेटिव काउन्सिल के सदस्य के रूप में काउन्सिल के समक्ष अनेक प्रस्ताव रखे जिसमें प्राथमिक शिक्षा प्रणाली को क्रमश: अनिवार्य बनाना था।

सन् 1918 में विट्ठल भाई पटेल के प्रयासों के फलस्वरूप बम्बई राज्य के 'बम्बई' प्राथमिक शिक्षा अधिनियम पारित करवाया। गाँधीजी की वर्धा योजना को साकार रूप देने का प्रयास किया गया। विभिन्न प्रयासों के फलस्वरूप देश स्वतंत्र हुआ। संविधान के 45वें अनुच्छेद में अनिवार्य व नि:शुल्क व प्रारंभिक शिक्षा की बात की गई एवं एक दीर्घ समयान्तराल के बाद सन् 2009 में इसे शिक्षा के अधिकार के रूप में मान्यता दी गई।

भारतीय शिक्षा के विकास को एक नवीन दिशा प्रदान करने के लिए 1948 में मौलाना आजाद ने अखिल भारतीय शिक्षा सम्मेलन का आयोजन किया एवं पं. नेहरू ने इसका उद्घाटन कर शिक्षा प्रणाली में आमूल-चूल परिवर्तन पर बल दिया। 1948 में विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग की स्थापना की गई जिसने विश्वविद्यालयी शिक्षा में सुधार हेतु अपनी सिफारिशें दी। यह दुर्भाग्य ही रहा कि देश जहाँ प्राथमिक शिक्षा देने में असमर्थ था वहीं वर्धा योजना और कौशल शिक्षा को छोड़कर सीधे विश्वविद्यालयी शिक्षा की चिन्ता की जाने लगी। उसके पश्चात् 1952 में माध्यमिक शिक्षा आयोग व 1964 में कोठारी आयोग ने 'शिक्षा व्यवस्था में सुधार हेतु'' सिफारिशें दी परन्तु दुर्भाग्य से इनकी कुछ ही सिफारिशों को अमली-जामा पहनाया गया। इनकी अधिकांश सिफारिशें दस्तावेजों में ही सिमट कर रह गई। पड़ौसी विद्यालय की शिक्षा की संकल्पना जो समानता की पोषक बन सकती थी, क्रियान्वित नहीं की जा सकी।

1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति कुछ शिक्षाविदों द्वारा तैयार की गई थी, जिसमें आम जनता व शिक्षक वर्ग जो सीधे-सीधे विद्यार्थियों से संबंधित होते हैं, उनसे किसी प्रकार की कोई सलाह-मशविरा या सुझाव नहीं लिया गया। उच्च स्तर पर ही इसे तैयार कर दिया गया। परीक्षा प्रणाली पाठ्यक्रमों, पाठ्यपुस्तकों आदि में काफी उठापटक की गई और वर्षों तक शिक्षा नीति और शिक्षा व्यवस्था की तरफ से आँख मूँद ली गई।

इस प्रकार क्रमशः शिक्षा अपने पायदानों पर ऊपर की ओर कदम बढ़ाने लगी। शिक्षा को आधुनिक व तकनीकीयुक्त बनाने का प्रयास भी चलता रहा। 1986 में मानव शक्ति को संसाधन के रूप में विकसित करने के लिए शिक्षा के विकास का कार्यभार मानव संसाधन एवं विकास मंत्रालय को सौंपा गया। समय के साथ शिक्षा व्यवस्था में कई परिवर्तन आए, सर्व शिक्षा अभियान और राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान द्वारा सर्वप्रथम प्राथमिक शिक्षा पर और फिर माध्यमिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण के प्रयास जारी हैं। जन-जन की भागीदारी लाने के लिए संविधान में संशोधन कर शिक्षा का अधिकार व दूसरी तरफ कर्तव्यों में माता-पिता के कर्तव्यों में शिक्षा दिलवाना अनिवार्य कर्तव्य की श्रेणी में ला दिया गया है।

शिक्षा व्यवस्था में सुधार व बच्चों पर बढ़ते बोझ को देखते हुए माध्यमिक स्तर पर बोर्ड की परीक्षा को हटा दिया गया था। कक्षा 8 तक सब बच्चों को अनिवार्य रूप से पास करने की बात की गई थी। बच्चों के सर्वांगीण विकास व सर्वांगीण मूल्यांकन हेतु विभिन्न प्रकार की क्रियाकलापों व हर स्तर पर हर पक्ष के मूल्यांकन की व्यवस्था अपनाई गई परन्तु विभिन्न संस्थाओं द्वारा बच्चों का मूल्यांकन किया गया।PISA तथा प्रथम की सर्वे रिपोर्ट्स आई जिसमें शिक्षा के न्यून उपलब्धि स्तर की बात उभरकर आई। सामान्य गणित, हिन्दी व अंग्रेजी का ज्ञान न्यूनतम अपेक्षित स्तर से भी नीचे का पाया गया। आठवीं कक्षा का बच्चा तीसरी कक्षा तक के स्तर का ज्ञान भी नहीं रखता था। दूसरी तरफ निजी विश्वविद्यालयों व उच्च शिक्षा को विदेशी संस्थाओं को सौंपने पर सरकार राजी हो गई। जिसके कारण हमारी संस्कृति की अस्मिता, अक्षुण्णता तथा हमारे आदर्शों को नजरंदाज कर दिया गया तथा शिक्षा का व्यावसायीकरण होने के कारण समाज का मध्यम व निम्नस्तरीय वर्ग गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की पहुँच से वंचित हो गया।

ज्ञान आयोग (Knowledge Commission) उच्च शिक्षा में सुधार हेतु बनाया गया जिसके सुधारात्मक सुझाव अधिक कारागर सिद्ध नहीं हो सके। नई शिक्षा नीति आने की तैयारी जोर-शोर से है। बहुप्रतीक्षित नई शिक्षा नीति में सभी मुद्दों पर गहन विचार-विमर्श के बाद कौशलपरक, समतापरक व सबका समावेश करते हुए प्रत्येक नागरिक के लिए गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के समान अवसरों की उपलब्धता को सुनिश्चित करना अपेक्षित है।

विकास का मूलाधार शिक्षा है, सर्वांगीण विकास हेतु ऐसी शिक्षा की आवश्यकता है जिसके द्वारा शिक्षा पूर्ण कर नौकरी प्राप्त करने मात्र के एकांगी पक्ष को न देखा जाए वरन् व्यापक रूप से यह देखा जाये कि शिक्षा द्वारा समाज, राष्ट्र व विश्व का विकास किस प्रकार संभव है।

बहुत से तथ्य हैं जिनको सब ज्ञानवान जानते हैं परन्तु आँख मूंदकर उनकी अनदेखी कर रहे हैं जिसके कारण विकास के नाम पर हम अपने संसाधनों को अन्धाधुन्ध नष्ट करते जा रहे हैं। धरती पर प्रदूषण बढ़ता जा रहा है, ओजोन परत के सुरक्षा कवच का क्षय देखने में आ रहा है। आज लापरवाही के चलते अनेक तरह की जानलेवा बीमारियाँ आम बीमारियाँ बन चुकी हैं। हरित-क्रान्ति के नाम से रासायनिक उर्वरकों व कीटनाशकों का अंधाधुंध उपयोग किया जा रहा है, जिससे भूमि की उर्वरता का क्षरण हुआ है। किसानों के शिक्षित न होने से खाद्यान्न फसलें अखाद्य व जहरीली हो गई हैं। प्लास्टिक के अवाँछित उपयोग ने भी खाद्यान्नों को जहरीला बनाने का कार्य किया है। आज पानी, तेल, घी, अचार, दूध, दही, दवाईयाँ आदि सभी वस्तुएँ प्लास्टिक पैकिंग में आती है उनमें मौजूद हानिकारक रसायन इन तरल पदार्थों से अभिक्रिया कर इन्हें विषाक्त बनाते हैं। हमें ज्ञात है कि ये हानिकारक हैं। हालाँकि शिक्षा विकास हेतु होती है लेकिन हमने आँखें बंद कर रखी हैं।

खाने-पीने का सामान एवं फल सब्जी के ठेले अधिकतर गन्दी नालियों व गन्दगी के ढेर के पास लगे दिखाई देते हैं। जो सीधे-सीधे बीमारियों व रोगों को आमन्त्रित करते हैं। वहीं दूसरी तरफ जूतों की बिक्री हेतु शानदार वातानुकूलित शोरूम खुले हैं। मच्छरों की अधिकता देखते हुए घर-घर में विकर्षकों जैसे Good-Night, Allout आदि का प्रयोग आम बात हो गई है। कीड़े-मकोड़ों को मार सकने वाली जहरीली गैस हमारी सेहत के साथ भी खिलवाड़ करती है। मानव का विकास करना चाहते हैं तो ज्ञात ज्ञान का उपयोग मानव विकास हेतु करना होगा, उसे मानव की बर्बादी व विनाश का कारण नहीं बनने देना होगा। ऐसी शिक्षा बच्चों से लेकर बड़ों तक, प्राथमिक स्तर से लेकर उच्चतम स्तर वाले सभी केन्द्रों पर दी जानी चाहिए तभी शिक्षा विकास का आधार बनेगी। तभी हम मिलेनियम व सस्टेनेबल डेवलपमेंट लक्ष्यों को प्राप्त कर पायेंगे और हमारे देश के नागरिकों को स्वस्थ व विकसित समाज का अंग बनाकर उनका सम्पूर्ण विकास कर सकेंगे।❑

(प्रोफेसर - भौतिक विज्ञान,
क्षेत्रीय शिक्षा संस्थान, अजमेर)

# शिक्षा से उद्यमिता विकास

भारत में अन्य देशों की अपेक्षा स्थानीय उत्पादन क्षेत्र मजबूत है किन्तु उत्पादन तथा उत्पादों की माँग में कमी होने के कारण निर्माण से जुड़े स्थानीय उद्योग विकसित नहीं हो पाते। पश्चिमी अर्थव्यवस्था के अनुसरण के प्रयास में भारतीय अर्थव्यवस्था आर्थिक संकटों से जूझ रही है। उदारवादी अर्थव्यवस्था के नाम पर लाखों बहुराष्ट्रीय कम्पनियों द्वारा भारतीय परम्परागत उद्यमों को नष्ट करने व आर्थिक विकास को रोकने के प्रयास निरन्तर हो रहे हैं। इसमें मुक्त व्यापार समझौते के तहत चीन व अन्य विदेशी वस्तुओं का आयात 79 प्रतिशत बढ़ गया।

❑ डॉ. रेखा भट्ट

किसी भी देश की समृद्धि आर्थिक विकास एवं उद्यमिता के सामर्थ्य पर निर्भर करती है। शिक्षा ही मानव शक्ति को रोजगार एवं उद्यमितापूर्ण बनाती है। वर्तमान परिस्थितियों में भारतीय शिक्षा के सामर्थ्य का पूर्ण लाभ नही मिल पा रहा है। तकनीकी शिक्षा द्वारा जीवन की गति को तेज किया जा सकता है। भारत की व्यावसायिक व औद्योगिक आवश्यकताएँ यहाँ के सामाजिक परिवेश के अनुसार निर्धारित होती है। इन आवश्यकताओं के अनुरूप ही वर्तमान शिक्षा में उद्यमिता विकास को समाहित करने की आवश्यकता है।

भारत जैसे विकासशील देश को विकसित देशों की श्रेणी में लाने के लिए देश की अधिकाँश ग्रामीण जनसंख्या को साक्षरता के साथ-साथ कौशल विकास तथा उद्यमिता विकास जैसी आधारभूत शिक्षा उपलब्ध कराना अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार देश में नगरों की संख्या एवं नगरीय जनसंख्या निरन्तर बढ़ती जा रही है। सन् 1951 में कुल जनसंख्या के अनुपात में 83 प्रतिशत ग्रामीण जनसंख्या एवं 17 प्रतिशत नगरीय जनसंख्या थी, जो 2011 में 68.84 प्रतिशत ग्रामीण जनसंख्या एवं 31.16 प्रतिशत नगरीय जनसंख्या हो गई है। रोजगार प्राप्ति एवं बेहतर जीवनयापन की संभावनाओं को तलाशते ग्रामीणों का शहरों की ओर पलायन तेजी से बढ़ रहा है। नगरीय जनसंख्या की अनियंत्रित वृद्धि से नगरों में कई प्रकार की आर्थिक, सामाजिक व पर्यावरणीय समस्याएं जन्म ले रही है।

आर्थिक विकास की योजनाओं का वास्तविक लाभ बड़े उद्योगों को ही मिल पा रहा है। यदि पिछड़े व ग्रामीण क्षेत्रों को भी इन योजनाओं का लाभ मिले तो शिक्षा में निवेश को बढ़ाया जा सकता है। कृषि, व्यवसाय एवं प्रबंधन विषयों में स्थानीय प्रशिक्षण केन्द्र, प्रयोगशाला एवं अनुसंधान केन्द्र खोले जा सकते हैं। शिक्षण संस्थानों व उद्योगों के माध्यम से बाजार माँग के अनुसार स्थानीय उत्पादन की गुणवत्ता को बढ़ाने में आपसी सहयोग स्थापित किया जा सकता है। बुनियादी शिक्षण के साथ ही डेयरी, पशुपालन, मछलीपालन, जैविक कृषि आदि क्षेत्रों में उचित प्रशिक्षण द्वारा उद्यमिता व स्वरोजगार को प्रोत्साहन दिया जा सकता है। इससे आर्थिक उन्नति के साथ-साथ तकनीकी विकास भी संभव होगा। ग्रामीण क्षेत्रों की मूलभूत सुविधाओं में वृद्धि एवं इन क्षेत्रों में बिजली, पानी,

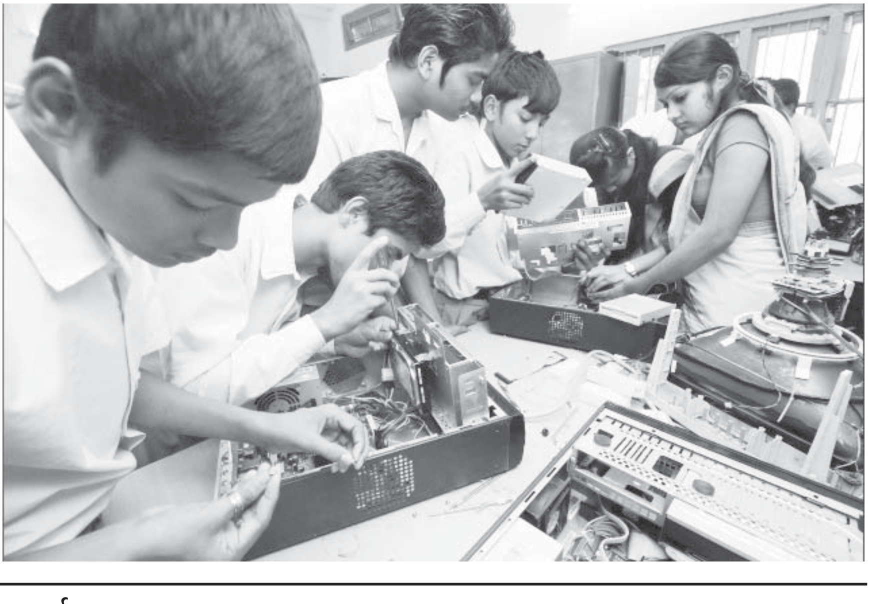

सड़क, यातायात आदि के अभाव को दूर किया जा सकेगा।

आज महानगरों से प्रतिभावान बेरोजगार, विद्यार्थी, कुशल पेशेवर श्रमिक एवं कारीगर बड़ी संख्या में अच्छे रोजगार और उच्च वेतनमान की तलाश में विकसित देशों की ओर पलायन कर रहे हैं। भारतीय संस्थानों द्वारा भारी राशि खर्च कर तैयार किए गए दक्ष कार्मिक विदेशी कम्पनियों के आर्थिक विकास को बढ़ा रहे हैं। इस कारण भारतीय अर्थव्यवस्था को कोई सीधा लाभ नही मिल पा रहा है। युवा प्रतिभा के पलायन के कारण आने वाले समय (वर्ष 2020) में, जब देश की युवा आबादी 86.9 करोड़ हो जायेगी, तब विश्व में सबसे अधिक युवा आबादी वाले देश भारत में युवा कार्यशील समूह उपलब्ध नही हो सकेंगे। निजी व सार्वजनिक प्रकार के सभी शिक्षण संस्थानों से विद्यार्थी स्नातक एवं स्नातकोत्तर की डिग्री प्राप्त करने के बाद भी, उद्यमिता विकास में सक्षम नही हो पाते अत: रोजगार की पात्रता भी अर्जित नही कर सकते हैं।

परम्परागत पाठ्यक्रम शिक्षण से आज विद्यार्थियों में ऑनलाइन शिक्षा का रुझान बढ़ रहा है। भारत में आधुनिक शिक्षा व्यवस्था में परीक्षा प्रणाली व ग्रेडिंग प्रणाली विद्यार्थी को सीखने व समझ विकसित करने की कोई योजना प्रदान नही करती है। इस कारण अधिकाँश युवा आभासी कक्षाओं में विषयों को ज्यादा अच्छी तरह सीख व समझ सकते हैं, तकनीकी व मशीनरी के कारण अकुशल श्रमिकों के क्षेत्र में रोजगार घटते जा रहे हैं। वहीं कृत्रिम बुद्धिमता द्वारा अत्यधिक कौशल की माँग वाले क्षेत्रों में भी रोजगार समाप्त होते जा रहे हैं। भारतीय समाज की आवश्यकताओं के अनुसार शिक्षण को व्यावहारिक बनाना होगा तथा शिक्षा में उद्यमिता को बढ़ावा देकर ही युवा प्रतिभाओं के पलायन को रोका जा सकेगा।

भारत में अन्य देशों की अपेक्षा स्थानीय उत्पादन क्षेत्र मजबूत है किन्तु

उत्पादन तथा उत्पादों की माँग में कमी होने के कारण निर्माण से जुड़े स्थानीय उद्योग विकसित नहीं हो पाते। पश्चिमी अर्थव्यवस्था के अनुसरण के प्रयास में भारतीय अर्थव्यवस्था आर्थिक संकटों से जूझ रही है। उदारवादी अर्थव्यवस्था के नाम पर लाखों बहुराष्ट्रीय कम्पनियों द्वारा भारतीय परम्परागत उद्यमों को नष्ट करने व आर्थिक विकास को रोकने के प्रयास निरन्तर हो रहे हैं। इसमें मुक्त व्यापार समझौते के तहत चीन व अन्य विदेशी वस्तुओं का आयात 79 प्रतिशत बढ़ गया। जिन उत्पादों को भारत वर्षों से निर्यात करने में सक्षम रहा है, उन्हीं उपक्रमों में विदेशी निवेश बढ़ाने से बड़ी मात्रा में विदेशी मुद्रा देश से बाहर जा रही है। देश में जी.डी.पी. (सकल घरेलू उत्पाद) का 3.3 प्रतिशत ही शिक्षा पर खर्च किया जा रहा है, जो देश की कुल आबादी के अनुपात में बहुत कम है। स्थानीय स्तर पर शिक्षण द्वारा युवाओं की उद्यमशीलता बढ़ाकर तथा स्थानीय उद्यमियों द्वारा पूँजी निवेश करके स्थानीय उद्योगों का विकास हो सकेगा।

शिक्षित युवाओं में सामाजिक आवश्यकताओं के अनुसार उत्पादों की खोज व स्थानीय लाभ के लिए उत्पादों को प्रयोग में लाने की क्षमता द्वारा व्यावसायिकता विकसित होगी और उनकी प्रबंधन की क्षमता का समुचित उपयोग होगा। स्थानीय ज्ञान व अनुभव के साथ प्राकृतिक संसाधनों व कुशल स्थानीय श्रम शक्ति सम्मिलित रूप से युवा उद्यमिता विकास में सहायक होंगे।

आधुनिक शिक्षण पद्धति में सुधार करते हुए पाठ्यक्रमों में उद्यमिता कार्यशालाओं को सम्मिलित करने से सभी क्षेत्रों में उद्यमिता का वातावरण निर्मित होगा। वर्षों पुरानी पुस्तकीय शिक्षण पर आधारित मैकॉले पद्धति से अलग हटकर क्रियात्मक शिक्षण एवं उद्यमिता को बढ़ावा देने से भारत जैसे कृषि प्रधान देश में आर्थिक विकास होगा, देश की अर्थव्यवस्था तेजी से आगे बढ़ेगी। ब्रिटिश शासनकाल से पहले भारत के 34 प्रतिशत सकल उत्पाद एवं व्यापार के वैश्विक योगदान को पुन: प्राप्त किया जा सकेगा। वर्तमान शिक्षा में उद्यमिता विकास को समाहित करने से ही भारत अपने वैभव और समृद्धि को प्राप्त कर विश्व की अर्थव्यवस्था में प्रथम स्थान पर स्थापित होगा। ❑

(व्याख्याता-रसायन शास्त्र, राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर)

**शिक्षा में आमूलचूल परिवर्तन के लिए शैक्षणिक गुणवत्ता पर सरकार का ध्यान जा रहा है। केन्द्र सरकार ने बजट में परीक्षाओं में सुधार हेतु 'राष्ट्रीय बोर्ड' बनाने की घोषणा की है। देश का विकास शिक्षा से ही संभव है इस सम्बन्ध में विचार व्यक्त करते हुए पूर्व राष्ट्रपति ए.पी.जे. अब्दुल कलाम ने कहा है कि 'देश में फैली निरक्षरता, गरीबी, अज्ञानता, रूढ़िवादिता तब तक नहीं मिटेगी जब तक शिक्षा पर ध्यान देकर, सरकार-जनता प्रयत्न न करे।' प्रत्येक देशवासियों को आगे बढ़ने के समान अवसर नहीं मिलेंगे जब तक शिक्षा में आमूलचूल परिवर्तन नहीं होगा।**

# राष्ट्रीय विकास के मूल्यांकन का आधार - शिक्षा

❑ **बजरंग प्रसाद मजेजी**

**प्र**त्येक राष्ट्र के गठन एवं विकास का मूल तत्त्व शिक्षा ही रहा है। जो राष्ट्र जितना शिक्षित है, वह सभी क्षेत्रों में उतनी ही शक्ति संचय करके राष्ट्रों के संघ में अपना गौरवपूर्ण स्थान ग्रहण करने में समर्थ हुआ है। प्राचीन काल से ही भारत विश्व में सम्मान योग्य इसलिए था कि उसके पास ऋषियों, तपस्वियों, महापुरुषों के उदात्त विचार एवं शिक्षा के प्रति उनकी स्पष्ट एवं समाजोन्मुखी उन्नति के लिए ठोस कार्यप्रणाली थी। भारत की प्राचीन शिक्षा व्यवस्था बहुत सम्पन्न थी। शिक्षण संस्थाओं में किसी भी प्रकार का राजनैतिक हस्तक्षेप नहीं था। शिक्षण संस्थाएँ स्वायत्त तथा स्वतंत्र थी। आचार्य निर्भय थे। राजा-महाराजाओं को भी गुरुकुल में आचार्यों द्वारा प्रणीत जीवनमूल्यों और आदर्शों का पालन करना पड़ता था। प्राचीन काल की शिक्षा प्रणाली में श्रवण, मनन, स्वाध्याय, प्रश्नोत्तर, शंका निवारण, वाद-विवाद, प्रयोग, अभ्यास ज्ञानार्जन के प्रमुख अंग माने जाते थे। प्राचीन भारतीय शिक्षा के केन्द्र तक्षशिला, नालन्दा, बल्लभी, विक्रमशिला, कांची, काशी थे। जिनमें शस्त्र-शास्त्र, नीतिशास्त्र, समाज-शास्त्र, राज्य प्रबन्धन, नैतिक संस्कार की शिक्षा दी जाती थी। इन शिक्षा केन्द्रों का अनुशासन राजा-रंक को एक समान रूप से मानना होता था। भारत के वैज्ञानिकों, प्रतिभावान ऋषियों-महर्षियों ने जिनमें प्रमुख वेदव्यास, वशिष्ठ, विश्वामित्र, महर्षि अत्रि, भारद्वाज, याज्ञवल्क्य, अगस्त्य, शौनक, आदिशंकराचार्य, मनु, मण्डनमिश्र, पाराशर जैसे विद्वान शिक्षाशास्त्री, वैज्ञानिक, आचार्य थे, जिन्होंने शिष्यों को, राष्ट्र को सभी विधाओं में पारंगत करने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। भारत के तत्कालीन गणितज्ञों ने शून्य की संकल्पना विश्व को दी थी। ई.स. 3000 पूर्व गणित सम्बन्धी महत्त्वपूर्ण जानकारी उन्हें थी। शून्य सूत्र और ज्यामिति के अनेक सूत्रों को हमारे प्राचीन काल के गणितज्ञ जानते थे। ग्रहों की गति, उनका राशियों में प्रवेश, कृषि, चिकित्सा भौतिकशास्त्र, तकनीक शास्त्र का मौलिक ज्ञान भारतीयों को था। भारत की सम्पन्न शिक्षा व्यवस्था का वर्णन प्रसद्धि लेखक धर्मपाल ने अपने ग्रन्थ 'रमणीय वृक्ष' (दी ब्यूटीफुल ट्री) में किया है। अनेक विदेश यात्रियों ने भी भारत की शिक्षा व्यवस्था की प्रशंषा की है। पाश्चात्य विद्वानों में ए. मेंकोन्जी, वीलर यूनीलकोज, पी. जॉनस्टोन, शॉपनहावेर, मेक्समूलर आदि ने भारत की शिक्षा व्यवस्था, भारत के विकास में शिक्षा के महत्त्व को स्वीकार किया। जेक्सन श्राइवर ने 1968 में छपी पुस्तक 'द अमेरिकन चेलेन्ज' में अमेरिका के

विकास का श्रेय, शिक्षा पर जबर्दस्त ध्यान देना माना है।

**शिक्षा के प्रति उदासीनता का परिणाम**

स्वतंत्रता के बाद भारत के राजनीतिज्ञों ने शिक्षा के महत्त्व का कम अंकन किया है। सत्ता प्राप्त करने के लिए वोट बैंक को सुदृढ़ करना ही ध्येय रखा। इस कारण देश के राष्ट्रपति, मुख्यमंत्री तथा शिक्षा मंत्रियों को शिक्षा के गिरते स्तर पर अब चिन्ता हो रही है। दुनिया के सभी सम्पन्न राष्ट्र शिक्षा व्यवस्था पर सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) का 5 से 8 प्रतिशत तक व्यय करते हैं, जबकि भारत में 3.3 प्रतिशत व्यय हो रहा है। वर्तमान बजट 2017 में भी शिक्षा पर देश की जी.डी.पी. में 3.71 प्रतिशत 79.686 करोड़ रुपये व्यय की योजना है। जबकि कोठारी आयोग ने 50 वर्ष पूर्व ही शिक्षा पर 6 प्रतिशत व्यय का सुझाव दिया था। वर्तमान शिक्षा की बेहतर स्थिति के लिए 10 प्रतिशत व्यय प्रस्तावित होना चाहिए। वर्तमान शिक्षा प्रणाली में बाजारवाद, भूमण्डलीकरण का जोर है। शिक्षा का व्यवसाय चल पड़ा है। शिक्षा व्यवसायोन्मुखी होती जा रही है, जिसकी मूलवृत्ति लाभ केन्द्रित है। इस कारण इसमें भारी उद्योग एवं उद्योगपति सम्मिलित हो रहे हैं। इससे शिक्षा मूल उद्देश्य से दूर होती जा रही है। यदि शिक्षा का उद्देश्य सिर्फ नौकरियाँ हो और अंदर की आँख न खुले तो वह शिक्षा बेकार है। शिक्षा वह कुंजी है जो व्यक्ति को महान बनाती है, राष्ट्र को महाशक्ति।

वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में शिक्षा के गिरते स्तर पर सवाल उठ रहे हैं। राजनेता शिक्षकों से परिणाम चाहते हैं, विद्यालय शिक्षकों की कमी से त्रस्त हैं। 'पीसा' नामक अन्तर्राष्ट्रीय शिक्षा जाँच एजेन्सी ने बताया है कि भारत के बच्चों का स्तर दुनिया में सबसे नीचे पाया गया है। भारत के नीचे सिर्फ एक छोटा सा देश किर्गिस्तान है। भारत में 10 वर्ष के 50 प्रतिशत बच्चे कागज पर लिखा पढ़ी नहीं सकते। इसी प्रकार 14 वर्ष के 50 प्रतिशत बच्चे पढ़ाई से तंग आकर विद्यालय छोड़ जाते हैं। स्थिति यह है कि प्राथमिक विद्यालय के 22 करोड़ बच्चों में मुश्किल से 2 करोड़ बच्चे स्नातक स्तर तक पढ़ने जा पाते हैं। एनुअल स्टेटस ऑफ एज्यूकेशन रिपोर्ट (असर) 2017 के सर्वेक्षण में भी राष्ट्रीय स्तर पर पढ़ाने की स्थिति दयनीय बताई है। कक्षा 5 के बालक की स्थिति बहुत खराब तो कक्षा 8 के बालकों की स्थिति भी ठीक नहीं है। कक्षा 8 के 25 प्रतिशत बालक कक्षा 2 की पुस्तक नहीं पढ़ सकते हैं। गणित, अंग्रेजी, विज्ञान की स्थिति तो इससे भी दयनीय है। इसका एक कारण शिक्षा मातृभाषा में नहीं देना भी है। दुनिया के किसी भी शक्तिशाली देश में विदेशी भाषा को पढ़ाई का माध्यम नहीं माना जा रहा है। वे मातृभाषा में पढ़ाई कराना पसन्द करते हैं। हमारे यहाँ अंग्रेजी भाषा को पढ़ाई के माध्यम को प्रधानता दिये जाने से बालक में मौलिकता नष्ट होती है, विचार शक्ति घटती है, वे रटटू तोते बन जाते हैं। उनमें गुलाम मानसिकता पैदा हो जाती है।

**भारत में शिक्षा का विकास**

भारत की वैज्ञानिक सोच एवं प्रगति का प्राचीन इतिहास गौरवपूर्ण रहा है। कृषि उत्पादन में न केवल आत्मनिर्भरता अपितु निर्यात की स्थिति में देश है। आधारभूत सुविधाओं का विस्तार, विशेष औद्योगिक उत्पादन, उर्जा उत्पादन, वैज्ञानिक प्रगति, सूचना प्रौद्योगिकी, अन्तरिक्ष अनुसन्धान, रक्षा यन्त्रों में आत्मनिर्भरता हमारे देश के विकास के द्योतक हैं। शिक्षा के क्षेत्र में केन्द्रीय विश्वविद्यालय, राज्य विश्वविद्यालय, डीम्ड विश्वविद्यालय, निजी विश्वविद्यालयों की विशाल संख्या के अतिरिक्त देश में आईआईटी, आईआईएम, एमएनआईटी, भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, भारतीय प्रबन्धन संस्थान, मेडिकल काउन्सिल ऑफ इंडिया, चार्टड एकाउन्टेन्ट ऑफ इंडिया, जैसी संस्थायें नवयुवकों को चिकित्सा, इंजीनियर, उद्योग में निपुण करने में महत्त्वपूर्ण योगदान दे रही हैं। शिक्षा में आमूलचूल परिवर्तन के लिए शैक्षणिक गुणवत्ता पर सरकार का ध्यान जा रहा है। केन्द्र सरकार ने बजट में परीक्षाओं में सुधार हेतु 'राष्ट्रीय बोर्ड' बनाने की घोषणा की है। देश का विकास शिक्षा से ही संभव है इस सम्बन्ध में विचार व्यक्त करते हुए पूर्व राष्ट्रपति ए.पी.जे. अब्दुल कलाम ने कहा है कि 'देश में फैली निरक्षरता, गरीबी, अज्ञानता, रूढ़िवादिता तब तक नहीं मिटेगी जब तक शिक्षा पर ध्यान देकर, सरकार-जनता प्रयत्न न करे।' प्रत्येक देशवासियों को आगे बढ़ने के समान अवसर नहीं मिलेंगे जब तक शिक्षा में आमूलचूल परिवर्तन नहीं होगा। उन्होंने 5 सूत्र पर ध्यान देने को कहा - (1) साक्षरता 75 प्रतिशत तक पहुँचाना (2) कठिन परिश्रम (3) साक्षरता एवं शिक्षा द्वारा अमीर-गरीब की खाई समाप्त करना (4) पर्यावरण शुद्ध करने हेतु वृक्षारोपण (5) जल संग्रहण के प्रति सभी का रुझान हो। उन्होंने कहा कि विकसित भारत मिशन चुनौतीपूर्ण है। राष्ट्र में समृद्धि, सुख और शान्ति साथ-साथ उपजती है, जब हम तीनों को भारत में पायेंगे, तभी भारत सच्चे अर्थों में विकसित राष्ट्र कहलायेगा। डॉ. कलाम के एक गीत 'यौवन का गीत' के ये पंक्तियाँ प्रासंगिक हैं-

**धरती पर, धरती से ऊपर**
**और धरती के भीतर भी,**
**मैं ज्ञान का दीपक जलाए रखूँगा,**
**ताकि पूरा हो सके स्वप्न-**
**विकसित भारत का।**

(स्वतन्त्र लेखक चिंतक)

# उच्च शिक्षा: दशा और दिशा

**शिक्षालय समाज निर्माण का कारखाना होता है, इसमें जैसा माल तैयार होगा समाज वैसा ही होगा। हमारे देश की उच्च शिक्षा विद्यार्थियों को आत्मनिर्भरता का गुर सिखाने में असफल रही है। अध्ययनरत रहते हुए वे पुस्तकीय ज्ञान को परीक्षा देने तक ही संचित रखते हैं। यही कारण है कि प्राय: स्नातक/स्नातकोत्तर कक्षा पास कर चुका विद्यार्थी 'क्लर्क' बनना पंसद करता है। उच्च शिक्षा में अध्ययनरत शिक्षार्थी में अनुशासन, आज्ञापालन, ईमानदारी, त्याग और उत्तरदायित्व की भावना, परोपकार, बड़ों का सम्मान, नम्रता, नियमितता, शिष्टाचार, समय का सदुपयोग, सहनशीलता और स्वाध्याय आदि गुणों का होना आवश्यक है। किन्तु आज के शिक्षार्थी तो क्या स्वयं शिक्षक भी अपने नैतिक और शैक्षणिक दायित्वों का ईमानदारी से निर्वाह करने में पीछे हट रहे हैं। जहाँ शिक्षक, शिक्षार्थी और शिक्षण अपने मूल ध्येय से भटक गये हो वहाँ स्वाभाविक है कि उच्च शिक्षा दिशाविहीन होगी।**

**❑ डॉ. बुद्धमति यादव**

शिक्षा मानव जीवन को सर्वश्रेष्ठ बनाने का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण साधन मानी जाती है। शिक्षा के द्वारा प्राप्त ज्ञान, बोध तथा कौशल से ही व्यक्ति अपने जीवन की विभिन्न समस्याओं का समाधान करता है। वह अधिकारों के प्रति सजग रहते हुए अपने कर्त्तव्यों का समुचित ढ़ंग से पालन करता है। लोकतांत्रिक राष्ट्र में वैयक्तिक विकास, सामाजिक विकास तथा राष्ट्रीय उन्नति के लिए उसकी शिक्षा व्यवस्था की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। अतिश्योक्ति नहीं होगी कि भारत आने वाले समय में एक बड़ी आर्थिक महाशक्ति के रूप में पहचाना जायेगा। चूँकि शिक्षा, आर्थिक व्यवस्था के सभी स्तरों के लिए मानव को संसाधन के रूप में विकसित करती है। अत: देश के शैक्षिक, राजनैतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और सामाजिक विकास में उच्च शिक्षा को एक मजबूत स्तम्भ के रूप में व्यवस्थित करना आवश्यक है।

भारत में उच्च शिक्षा के क्षेत्र में तक्षशिला, नालंदा जैसे विश्वविद्यालयों ने वर्षों पूर्व एक स्वर्णिम स्थान प्रदान किया है, जिसमें पूरे विश्व से शिक्षार्थी, शिक्षा ग्रहण करने आते थे। किन्तु वर्तमान परिस्थितियों में भारतीय उच्च शिक्षा के उन्नत स्वरूप को स्थापित करना एवं उसको आगे बढ़ाना, एक बहुत बड़ी चुनौती प्रतीत होती है। विश्व की सबसे बड़ी तथा विशाल शिक्षा प्रणाली होने के बावजूद उच्च शिक्षा के प्रसार व विकास में विभिन्न प्रकार की विसंगतियाँ पाई गई हैं। भारत में आई.आई.टी. एवं आई.आई.एम तथा कुछ गिने-चुने विश्वविद्यालयों को उच्च शिक्षा के क्षेत्र में उपलब्धियों के रूप में एक ओर रखा जाये तो उच्च शिक्षा से जुड़े शेष लगभग सभी शिक्षण संस्थानों के लिए उच्च शिक्षा का स्वरूप अव्यवस्थित है।

स्वतंत्रता के पश्चात् उच्च शिक्षा का संख्यात्मक दृष्टि से विस्तार हुआ। कई विश्वविद्यालय और महाविद्यालय स्थापित हुए, ऐसा प्रतीत होने लगा जैसे शिक्षण संस्थानों की बाढ सी आ गई, लेकिन विश्वस्तरीय प्रतिष्ठित संस्थान के रूप में या यूँ कहें कि गुणात्मकता की दृष्टि से वे अपना कोई स्थान नहीं बना पाए। इस हेतु विश्व के सबसे बड़े लोकतांत्रिक देश के उच्च शिक्षण संस्थानों की समस्याओं का समाधान कर शिक्षार्थियों, शिक्षकों तथा प्रशासनिक प्रतिनिधियों को अधिकतम प्रयास करने होंगे।

शिक्षालय समाज निर्माण का कारखाना होता है, इसमें जैसा माल तैयार होगा समाज वैसा ही होगा। हमारे देश की उच्च शिक्षा विद्यार्थियों को आत्मनिर्भरता का गुर सिखाने में असफल रही है।

अध्ययनरत रहते हुए वे पुस्तकीय ज्ञान को परीक्षा देने तक ही संचित रखते हैं। यही कारण है कि प्राय: स्नातक/स्नातकोत्तर कक्षा पास कर चुका विद्यार्थी 'क्लर्क' बनना पंसद करता है।

उच्च शिक्षा में अध्ययनरत शिक्षार्थी में अनुशासन, आज्ञापालन, ईमानदारी, त्याग और उत्तरदायित्व की भावना, परोपकार, बड़ों का सम्मान, नम्रता, नियमितता, शिष्टाचार, समय का सदुपयोग, सहनशीलता और स्वाध्याय आदि गुणों का होना आवश्यक है। किन्तु आज के शिक्षार्थी तो क्या स्वयं शिक्षक भी अपने नैतिक और शैक्षणिक दायित्वों का ईमानदारी से निर्वाह करने में पीछे हट रहे हैं। जहाँ शिक्षक, शिक्षार्थी और शिक्षण अपने मूल ध्येय से भटक गये हो वहाँ स्वाभाविक है कि उच्च शिक्षा दिशाविहीन होगी।

**उच्च शिक्षा में सुधार हेतु सुझाव**

विश्वविद्यालयों एवं उच्च शिक्षण संस्थानों की प्रवेश नीतियाँ भिन्न होती है। कुछ संस्थानों में प्रवेश के कड़े नियम हैं तो कहीं आसानी से उच्च शिक्षा में शामिल होने का मौका मिल जाता है। ऐसी स्थिति से निजात पाने के लिए आवश्यक है कि सार्वनिष्ठ प्रवेश नीति, जो राष्ट्रीय स्तर पर मान्य हो, लागू की जाए। उच्च शिक्षा में पाठ्यक्रम की प्रकृति को देखते हुए प्रवेश का मापदण्ड बनाया जाना आवश्यक है जिससे मेहनती और उच्च शिक्षा को मन से स्वीकार करने वाला विद्यार्थी ही इसमें प्रवेश पा सके।

उच्च शिक्षण संस्थानों के पाठ्यक्रम में भी बदलाव की आवश्यकता महसूस की जा रही है। प्राय: पाठ्यक्रम बदलने के नाम पर कुछ पाठों को स्नातक से हटाकर स्नातकोत्तर स्तर पर समायोजित कर दिया जाता है या थोड़ी बहुत जो नयी पाठ्यवस्तु सम्मिलित की जाती है, वे विद्यार्थी की वर्तमान आवश्यकताओं एवं उनके गुणात्मक विकास की जरूरतों को पूरा करने में प्राय: अक्षम रहती है। अत: उच्च शिक्षा के स्तर में सुधार हेतु आवश्यक है कि पाठ्यक्रम शिक्षार्थी को आत्मनिर्भरता प्रदान करने वाला हो, ताकि व्यावहारिक जीवन में उसका उपयोग सम्भव हो सके।

शिक्षण संस्थानों की भूमिका उच्च शिक्षा के लिए अहम होती है। संस्थानों में सम्पूर्ण शिक्षण-कक्ष, पुस्तकालय, वाचनालय, प्रयोगशालाएँ, सभी विषयों के लिए सुविधायुक्त विभागीय कक्षों, शिक्षणोत्तर क्रियाकलापों के लिए अतिरिक्त कक्षा कक्षों के साथ सभागार, जिम्नेजियम आदि की व्यवस्थाएँ होनी आवश्यक हैं। संस्थानों की सम्पूर्ण भवन व्यवस्था एवं विषयवार शिक्षकों, कर्मचारियों तथा प्रशासनिक अधिकारियों की नियुक्ति होनी भी आवश्यक है। मानवीय संसाधनों की आपूर्ति होने पर ही उच्च शिक्षा में गुणात्मक वृद्धि की दर में उतरोत्तर वृद्धि सम्भव है।

किसी भी शिक्षण संस्थान को सर्वश्रेष्ठ बनाने में वहाँ के योग्य शिक्षकों की महत्त्वपूर्ण भूमिका रहती है। शिक्षक को शिक्षण रूपी पवित्र व्यवसाय के प्रति पूर्ण रुचि, जिम्मेदारी का भाव प्रदर्शित करना चाहिए। शिक्षक अपनी नियुक्ति के पश्चात् स्वयं भी अनुशासित रहे और शिक्षार्थियों को भी अनुशासित रखे। वह विषय के प्रति सृजनशील हो, विषय सम्बंधी यू.जी.सी. द्वारा निर्धारित किये गये विभिन्न क्रिया-कलापों में समय पर सहभाग करें, सदैव शोधार्थी और जिज्ञासु के रूप में ही अपने आपको स्थापित करें, शिक्षण कार्य को सदैव प्राथमिकता दे, तभी एक सफल शिक्षक के रूप में स्थापित होकर उच्च शिक्षा के विकास में सहयोग कर सकेगा।

शिक्षकों को तनाव मुक्त रखा जाना आवश्यक है। उच्च शिक्षा में शिक्षकों के लिए स्थानान्तरण नीति एक बड़ी समस्या है, जिसके कारण शिक्षक तनाव में रहता है और श्रेष्ठतम नहीं कर पाता। अत: उच्च शिक्षा विभाग द्वारा एक सतत् स्थानान्तरण नीति बनायी जा सकती है। प्रमोशन के लिए समय-समय पर डी.पी.सी. हो। ऐसा होने पर सभी शिक्षक आशान्वित होकर, तनाव-रहित रहते हुए अपने कार्यक्षेत्र में श्रेष्ठ प्रदर्शन कर सकेंगे।

उच्च शिक्षा की परीक्षा प्रणाली विद्यार्थियों के ज्ञान का सही मूल्यांकन नहीं कर पाती है। छात्र, गाइड और गेस पेपर के माध्यम से परीक्षाओं की तैयारी करता है, उसका उद्देश्य केवल पास होना मात्र ही रहता है। अत: उच्च शिक्षा से सम्बंधित लघुत्तरीय प्रश्न, बहुविकल्पीय प्रश्न, फैक्ट पर आधारित प्रश्नों को प्रश्न-पत्र में शामिल किया जाना चाहिए। विद्यार्थियों के पाठ्यक्रम का 70: मूल्यांकन परीक्षा के माध्यम से तथा 30: मूल्यांकन, कक्षा कार्य और गृहकार्य के माध्यम से किया जाना चाहिए, जिससे छात्र की विश्लेषणात्मक क्षमता को विकसित किया जा सके और छात्र पुस्तकों के अध्ययन की ओर लौट कर ज्ञानार्जन कर सके।

उच्च शिक्षा, जिसका मूल लक्ष्य अनुसंधान और विकास को दिशा देते हुए ऐसी शिक्षण व्यवस्था की स्थापना करना होता है जिससे शिक्षार्थी में सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, नैतिक, आलोचनात्मक और आध्यात्मिक समस्याओं का सामना करने की क्षमता विकसित हो किन्तु उच्च शिक्षण संस्थानों में इस ओर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया जा रहा। शिक्षकों को शोध और वर्तमान समय की जानकारी से अपडेट रहना आवश्यक है, समय-समय पर आयोजित संगोष्ठियों, कार्यशालाओं, सेमीनार आदि में सम्मिलित होकर ज्ञानार्जन सम्भव है। ऐसा करने से शिक्षक न केवल शोध कार्यों की ओर उन्मुख होगा अपितु उसकी शिक्षण विधियों में भी सजीवता आयेगी और छात्रों को गुणवत्तापूर्ण ज्ञान भी प्राप्त होगा।

निष्कर्षत: शिक्षा के समस्त अंगों का समेकित विकास करने पर ही शिक्षा की गुणवत्ता में वृद्धि सम्भव है तभी भारत की उच्च शिक्षा राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की बन सकती है। इसके लिए शिक्षा, शिक्षक और शिक्षार्थी तीनों को ही मिलकर प्रयास करने होंगे। ❑

(व्याख्याता हिन्दी, जी.डी. गर्ल्स कॉलेज, अलवर)

# India Needs World Class Nationalist Universities

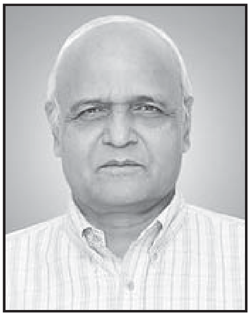

❑ Bhagwati Prakash Sharma

India needs to set-up world class, nationalist universities in the centenary year of commencement of the Banaras Hindu University (BHU) in 2017. Indeed the year 2017 being the centenary year of the commencement of first academic session of the Banaras Hindu University (BHU), offers an opportune moment to set up one or more world class universities with Nationalistic Orientation. Such a university needs to have a holistic approach aimed at integrating our rich heritage of ancient wisdom with the latest advances in science and technology with a techno nationalistic outlook. What Mahamana Madan Mohan Malviya Ji dreamt then, can best be redeemed today. Though the BHU is still one of the most vibrant places of higher learning in the country yet none of India's university figures as an outstanding university in the world.

Pandit Madan Mohan Malviya, a visionary and patriot extraordinary had very ambitiously envisioned and endeavored to set up and raise the BHU as a seat of higher learning, capable to excel at par with the world class universities like the Massachusetts Institute of Technology (MIT) and the Harvard University. Additionally, he had dreamt to integrate the rich heritage of various disciplines of our ancient wisdom with the latest State of the art technology. His prime motive was to place India in the front rank of advanced nations of the world and also to reinvigorate study of all our ancient disciplines and streams of wisdom. By virtue of his utmost patriotic dedication, Malviya Ji, the University could emerge as the largest residential university of Asia, with highest number of disciplines at one single place, incorporating all the latest disciplines along with most of the streams of our ancient wisdom. It could come true only by virtue of his proactive world- view and dedication for advancing higher education and research in Bharat. He had an ambitious target of placing the Banaras Hindu University

**Another major lacuna in our education is that it is devoid of any focus on ingraining ethics and values in the conduct and behavior of the passing out graduates from the higher education. Patriotic and nationalistic fervor is also altogether absent in most of the educational endeavors. Several Universities have become breeding grounds for separatist ideologies of new global left, lacking a bold focus upon nationalistic inclination and engagement.**

among the universities of highest order in the world, capable to excel in the multifarious arenas of higher education, research and technology capable to inspire upto date learnings.

In pursuance of his aforesaid ambition to build the BHU as a world class university, he had endeavored to attract the most outstanding talent from across the globe, ranging from eminent scientists like Ernest Rutherford, Sir Arthur Eddington, Albert Einstein and many others of this stature on to come over to India and join the BHU, in a joint scheme and cooperative endeavour with Sir C. P. Ramaswami Aiyer,Vice Chancellor of the Travancore university (Presently Kerala university). In 1940, Einstein had accepted his invitation to join the BHU. But at the time the acceptance letter of Albert Einstein was received in the BHU, Malviya Ji and Sarvpally Radhakrishnan, both were away from the town and this letter met with the usual bureaucratic procedure. So, it got late, by the time Malviya Ji warmly invited him to join the BHU, Eintein was on his way to settle in America. If Einstein would have joined the BHU in the 1940, it could cast an altogether different destiny of Bharat in scientific researches and raise it as a unique seat of higher and scientific learning, with global eminence in tune with the explicit dream of Malviya Ji for the BHU. Malviya Ji had all the odds, of that time, in his way, as Bharat was then, under the alien rule of the British. Yet, it was no mean achievement to the credit of Mahamana Malviya Ji to have established a 'Bharat-centric nationalist University of such advance standards with a deep focus upon both the ancient Bhartiya Hindu-heritage, as well as the most advanced fields of science and technology. Still to date, BHU is the only university in the country, having maximum disciplines related to our ancient wisdom and heritage.

However, yet there is not a single university in the country, to have a nationalist orientation as concieved by Malviya Ji, in the curricula and content and approach in social sciences (viz. economics, political science, sociology, geography etc in tune with Bhartiya ancient vision as enshrined shastras) or in Humanities (viz. Hindi, History, Sanskrit, English and various Bhartiya languages etc.) as well as in the field of science and technology to a Bharat-centric vision. There are universities like the Jawahar Lal Nehru University, cultivating a pro-marx or Pro-Lenin leftist vision and ideals in several disciplines of social sciences and humanities.

So, there is an urgent need to set up a few or atleast one such university capable to lead within the country as well as outside to portray nationalistic values, vision heritage and also to occupy place in top 20 or 50 universities of the world. However it was Malviya Ji's strong resolve that still the BHU is the largest residential university of Asia. Even the JNU, established with the aim of cultivating an outright left inclined focus with the overwhelming state support from a very strong Prime Minister like Mrs. Indira Gandhi, backed by the tacit support of a super power of that time, i.e. the erstwhile USSR could not overtake BHU in reveral respects, with the sound footing given by Malviya Ji.

But, today when Bharat is an independent and sovereign nation, with fastest rate of economic growth in the world, there is not a single Bhartiya university to figure among the top 150 universities of the world. Even among the top 500 universities of the world, India has only 8 universities out of 788 universities of the country. Even countries like Singapore and Israel do have 2-3 universities in top 100-150 universities. Like, Israel has 3 universites in the top 150 universities and 2 in top 100 (one at 67th rank and the other at 77th rank in the world) and 6 in top 200 universities of the world. While India has only 2 in top 200 universities of the world. While, India is 4500 times larger than Singapore and 150 times larger than Israel in area and 275 times larger than Singapore and 150 times larger than Israel in population.

Indeed education plays a vital and significant role in the development of a country and society including the development of its economy, technology, civilization and culture. India has very rich resource dividend in terms of natural and human wealth. Yet, in the overall nominal world GDP, the share of India is mere 2.90% and just 2.1% in the world manufacturing, inspite of a 16% share in the world population. Even in this 2.1% share in the gross world manufacturing the products and brands of domestically owned brands have less than one third

share bringing down it to less than 0.7%. morever, inspite of being endowed with rich iron ore deposits we are 4th largest producer of iron and steel in the world but we have less than 0.1% share in world ship building for want requisite advancements in maritime engineering. It is at a very primitive stage. To the contrary we contribute 10% by volume in pharma manufacturing and are called pharmacy of the world, where we have endeavoured to develop our khowledge and skill. Though in pharma too, it is mostly confined to 'off the patent' drugs, and has become possible only after changing the patent law in 1970. Now since 2005, when we had reverted back to the product patents regime, our right to manufacture post-2005 drug molecules has ceased even if we develop our own and alternative methods of synthesis.

In research, the country is miles behind its Asian counterparts, as well as most of the industrialized countries of the world as well, in creating intellectual property viz patents, trademarks, copyrights industrial designs, integrated circuits etc. According to the data released by the World Intellectual Property Oganization (WIPO) India has seen a drop in international patent applications to 1,423 under the Patent Cooperation Treaty in 2015,while US has 57,385,Japan (44,235), China (29,846) and Korea (14,626) figured in the top-10 list, registering a rise of 20%, 14% and 7%, respectively, from last year. India fared no better in terms of global trademark filings as well, under the Madrid System. It ranked 36th with only 150 trademarks filed in 2015, down from 153 in 2014, when it had seen a more than 70% increase in trademark registrations. It shows a very miserable scene on the front of new product and brand launches. Against a paltry figure of 150 filings, the trademark filings of the US (7,340), Germany (6,831), France (4,021), China (2,401), Japan (2,205) are 14 to 48 times. Data from the WIPO report, the breakthrough innovation and economic growth, highlights that the IITs though endeavoring to move ahead on research in nano-technology over other Bhartiya Universalities with over 5,000 scientific papers and 14 patents since 1970, are yet miles behind China, as the Chinese Academy of Sciences tops with 29,591 publications and 705 patent filings in nano technology. The country has a long distance to go in promoting quality in higher education and research as well as in inspiring innovations and research.

A lot of advancement is required in electronics, semi-conductor technology, silicon wafering, computer hardware, development of operating systems, development of new pharma and agrochemical molecules, nano technology, development, evolving high yielding varieties of seeds, including pulses and oil seeds developing organic cultivation & protection techniques and so on.

Another major lacuna in our education is that it is devoid of any focus on ingraining ethics and values in the conduct and behavior of the passing out graduates from the higher education. Patriotic and nationalistic fervor is also altogether absent in most of the educational endeavors. Several Universities have become breeding grounds for separatist ideologies of new global left, lacking a bold focus upon nationalistic inclination and engagement. Often, the centre-stage media is labeled with anti-national and self-defeatist views. People airing such views are a miniscule minority. Yet, their articulation has an overwhelming dominance.

The foremost shortcoming of higher education in Bharat is that it lacks and is devoid of rich ancient wisdom as enstrined in our ancient scriptoures nationalist orientation in curriculum and of require sensitation to national ethos and values.There are universities in the country indoctrinating leftist ideology and craze to pursue Marx, Lenin, Weber etc. or propagat confucianism. But, there is no seat of higher learning in the country to explicitly cultivate nationalist values, ethos and based upon our heritage and wisdom enshrined in our ancient scriptures.While talking for freedem of speech and human rights, certain sections always try to barter every thing for the rights and aspirations of separatists, terrorists, anti-national elements and even sucide bombers or the elements harbouring such sucide bombers.

State of studies in the country, in ancient Indian wisdom, enshrined in millions of pages of ancient scriptures is less than miniscule. This year is centenary year of founding the BHU, which was established by an act enacted

in 1915, with laying of the foundation stone of the university in 1916 where the first session started working through a gazette notification w.e.f. 1st October, 1917. It may be the most opportune moment in this centenary year of the BHU to lay a University for placing India in the forward and first rank of advanced nation in the world through a blend of the latest state of the art technology, pedagogy, nationalistic fervor and rich, ancient heritage and wisdom. To redeem the unfulfilled dream of Malviya Ji to set up, not only a world Class University, but also a front-ranking university of the world, which can also integrate the nationalistic out look and values, our rich ancient heritage. So, what Malviya Ji dreamt then, since 1904, when he first time proposed for a Hindu University or when Ms. Annie Besant proposed for a "University of India" can be better redeemed now. Malviya Ji had then dreamt to produce graduates from the BHU- (i) Who could excel like Einstein or Rutherford in science. (ii) Who could emulate Adi Shanker, Kumari Bhatt, Aryabhatt, Sayan, Mahidhar or Panini in ancient Bhartiya wisdom.

So, today we should aspire to set up a University capable to produce graduates, with the traits mentioned henceforth: (i) Who may execl like C.V. Raman, Ravindra Nath Tagore or Hargovind Khurana. (After Independence India could not bag a single nobal prize). (ii) Who may excel like Panini, Mahidhar, Saayan, Brahmgupt, Varah Mihir, in ancient Bhartiya wisdom. (iii) Who can articulate integral nationalistic holistic Bhartiya vision over the separatist minorityism or new global left-views. (iv) Who portray deeply ingrained values ethics in their thinking, conduct & behaviour with nationalist orientation.

Today, even we should not hesitate to bring less than 3-5 such universities, well scattered across the East, West, North, South and Central regions of the country, as moden Nalanda, Taxshila or Navdeep Universities of the glory of ancient past, capable to attract talent from across the globe. Even Israel, a country of half the size of Aksai Chin has world class universities, attracting students not only from across the globe, but, even from the enemic Arab countries, solely in pursuit of advanced knowledge. As already stated earlier that the BHU Act was passed in 1915, its foundation stone was laid in 1916 and it started working from October 1917. So, such an endeavour of setting up such University (ies) would be a true observance centenary of BHU and redeem the dream of Devta Purush (Godly man), Mahamana Malviya Ji to set up a world class university for Bharat. Gandhi Ji himself had addressed Malvija Ji as Devta Purush. ❑

(V.C.- Pacific University, Udaipur)

## UGC Passes Rules for 20 world-class institutions

The University Grants Commission (UGC) passed a new set of regulations to set up 20 world-class institutions and agreed to review the status of the deemed universities placed in 'Category B' by HRD Ministry's Tandon Committee in 2009.

It also approved a proposal to encourage research on the life and work of BJP ideologue Deen Dayal Upadhyay. Universities, from now on, can set up a research Chair named after him.

The Tandon panel was set up by former HRD minister Kapil Sibal after the quality of the then 126 deemed universities was questioned. It had found only 38 deemed universities worthy of the tag and they were placed in Category 'A'. Forty-four were found to be deficient on many counts and placed in Category 'B' and 44 were termed unworthy and placed in Category 'C'.

The Ministry last month wrote to UGC, asking it to start inspection of the Category 'B' institutions. This was discussed at a meeting on Wednesday. "Although the Category B institutions weren't stripped of their deemed university tag, the government had forbidden any expansion of these universities… If these institutions are no longer found to be deficient then UGC can lift the embargo on expansion," said a source.

The UGC also approved regulations aimed at creating an enabling architecture for 10 public and 10 private institutions to emerge as world-class institutions. It passed regulations for the 10 private 'Institutions of Eminence' and a set of guidelines for 10 public 'Institutions of Eminence'. The Institutions of Eminence will have greater autonomy compared to other higher education institutions.

Let us take science and technology as a naturally developing area of studies all over the world all at once, and all together. Here, we have to pace together with them, and there are some efforts from us to 'run in the science race' along with Europe also, though that is not at all really sufficient. We still have to go a long way to run the race with them. The point is, here, we can directly perceive a competition, and here, we shall remain conscious of where we have to lay more emphasis, where we are doing well, and were we are lagging behind.

# Developing Education and Educating Development

❑ Prof. TS Girishkumar

For some good time, all of us had been contemplat ing various matters concerning education at all levels, with the very noble National interest, which is really highly and desperately in need towards some ardent effort to restoring the status and glory of Bharat, a glory that used to be the case once upon a time. There may be many other societies, Greece for instance, that faced extinction of their Hellenistic religion, culture and civilisation. It may be impossibility for them to speculate in terms of restoring their ancient glory, as the whole thing is so completely lost, destroyed. Similar is also the case with some other societies as well. But Bharat is an altogether different case, the knowledge tradition and almost everything is still actively present and thriving. With definite effort, this shall not be a difficult task at all and indeed, many people tried to make efforts in such directions.

**The objectives to educating education, some stage settings from the past**

The whole notion of educating education comes from a definite end, purpose in the context of Bharat. Like RomillaThaper wished to say, there was a dark period in the History of Bharat from the Vedic civilisation to the Ganga settlement, (which of course was nullified by none other than Jim Shaffer), we, the people of present Bharat have an educational intellectual gap from Prithviraj Chauhan of Delhi to the 15th of August, 1947. Educating education ought to be simply filling this gap in the minds of learners of Bharat. Here, it is important to be aware of things those had gone into oblivion during this long span of time with us.

That period of Prithviraj Chauhan was the period where barbarians were killing one another in the out side world, no matter for what reason. It was a time, perhaps except Bharat, the whole world was behaving as barbarians, and I

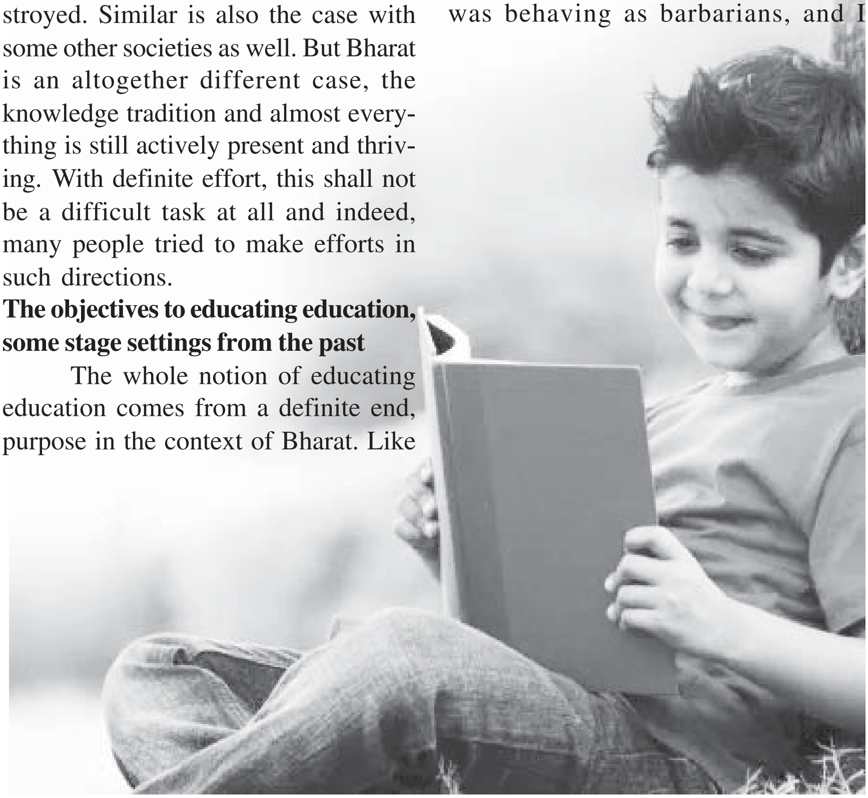

should not restrain from saying this. Naturally, when there was turmoil all over, in spite of our civilisational tranquillity, we also had to take the impacts, in a very serious manner. This land was rich; culturally, knowledge wise, spiritually, and economically. It was the money that attracted the invaders, and subsequently the luxury of becoming rulers. Alien rules also brought destructions. None of them were equipped to understanding the real riches of Bharat, so they did what they knew, to destroy all those they didn't understand.

The concept of 'Sanatana' is not empty: the ever lastingness gets exemplified through epochs in history: with all these, almost everything remained preserved, albeit many had to volunteer for ultimate sacrifices. However, all such sacrifices became meaningful; we are still what we are: and almost everything got preserved in manifold forms, and the society continued with minimal mutilations.

Naturally, it was only normal for free Bharat to bridge the gap between Prithviraj Chauhan and 1947, but in our real experience it is found that the whole thing became further mutilated. By then, new forces of destruction had swung into action, and such forces had all reigns under their control. By 1947, British imperialism had effectively left its vestiges among us, in the forms of, from Zamindari to games of cricket. In short, our society too remained another mirror image of both the US and Europe, particularly so in the area of education, researches, media, and even in stage, like cinema. The very name, Bollywood trying to make a mirror image of Hollywood itself speaks all about everything, and most unfortunately, there still are some people feeling proud of not only the nomenclature, but also of other things, perhaps not so wanted.

By the time we reach 1947, Europe still had considerable amount of Marxist oriented thinkers in all forms in publishing, media and in Universities, especially in Philosophy from where humanities began, and by then positive philosophy had successfully and effectively created a social 'science' for their easy as well as ongoing conduct. Being a mirror image, Bharat simply copied Europe in education as well as researches. This process is still powerful in our nation, though it is withering away, but through time alone. Only a very few people did put some resistance, and indeed, their efforts and sacrifices became meaningful, though in a slow pace. Perhaps this shall throw some light to the JNU phenomenon, which had initiated the JNU like phenomenon, and got celebrated and cashed through Bharat haters, with funding from Bharat haters abroad.

**Our Universities today**

After 1947, there were education commissions and a University Grants commission apart from several Councils for researches. Obviously, the available people to man such councils were again mirror images from Europe, suffering from the vestiges of Marxism and much modernity. They conducted things in manners as they knew which happened not in the interest of Bharat. There were also some wilful mutilations, from apparently innocent mutilations to serious mutilations to serve the interests of the political party in rule, whose individuals had agenda, and the party itself had agenda.

With the NDA government which just is trying to take positions, nothing really had changed intrinsically in education scenario. This comes from the fact that the focus in education had gone to an over enthusiasm in science and technology with the policy makers. Should we look at the appointments of the Vice Chancellors and other education administrators in our nation, one can find that almost all of them come from science and technology background. This may be seen as some kind of over enthusiasm with science and technology, if not fetishism. If we look at the new universities those came up of late, one can see that the humanities departments are scarcely taken care of.

**What ought to be done?**

Let us take science and technology as a naturally developing area of studies all over the world all at once, and all together. Here, we have to pace together with them, and there are some efforts from us to 'run in the science race' along with Europe also, though that is not at all really sufficient. We still have to go a long way to run the race with them. The point is, here, we can directly perceive a competition, and here, we shall remain conscious of where we have to lay more emphasis, where we are doing well, and were we are lagging behind. We do have continuous reminders to this, and we are really trying to meet the challenge.

But this is not the case in humanities. Humanities and other

Arts subjects are heavily value loaded. Here, the influence from Europe shall be nothing short of suicide. Science and technology is factual, causal and objective, which shall just be the same to everyone and everywhere. But values, culture, institutions of families, society etc. are not objective and universal. One cannot apply the same methods applied to science when it comes to humanities and other Arts subjects.

This makes it imperative for Bharat to develop its humanities and arts stream, remaining rooted in Bharatiya Sanskriti and at the same time getting connected to whatever may be going on in Europe. A copy or making mirror image here shall simply be self-destruction. The 'Swabhimana' we are supposed to have shall never get implanted, or shall never happen to us, albeit Swami Vivekananda had long shown the path to us through his very life. Indeed we had great minds guiding us up to all these from time immemorial, and this kept happening to us on a continuous basis, exactly in line with the instructions from Shrimad Bhagavad Gita. We also have many centres of spirituality in our nation, run by seers of present time, and they do cater much to the spiritual and cultural needs of Bharatiya society. My question is what is that we are doing in the field of education in this? Does our curriculum carry such instructions at all? Each of us, when thinking back through whatever we were taught in whichever levels, can at once realise that all Sanskriti and spirituality found in one is hardly through the educational curriculum. Indeed there are great teachers who are not many in numbers who carry out this mission with ardent fervour, but those efforts are only isolated, and often times they get estranged by their own 'progressive' colleagues.

**The role of Philosophy**

It is here that the role of Philosophy ought to be stressed conscientiously. I agree to the view of Dr. S Radhakrishnan that every Bharatiya is a Philosopher by default, it is in the very blood of every Bharatiya, etc. this is emotional, sentimental, and correct to a good extent, and we continue to be what we are precisely upon this. With all such things, with most of us revering philosophy, let us also see what is happening to departments of philosophies in our universities?

The requirement is to create a perspective, a Bharatiya perspective strongly footed on Bharatiya philosophical systems, through which everything else has to be looked at. Creating such a perspective is important, and enabling that perspective in the minds of generations shall be the only method to stand of our own. The point is, it must be possible for us to stand firmly rooted in the Vedopanishadic knowledge tradition and remain timely connected to philosophies all over the world. This at once shall make doing philosophy in Bharat a double task: of remaining rooted in Bharatiya Darsan Parampara and remaining connected to philosophies elsewhere, and shall not, cannot happen until we put much extra efforts in this direction.

To begin with, let us get our concepts cleared: no matter of what, what is dearly and direly required in academia, education is clarity at the level of concepts. To obtain conceptual clarity in a typical Bharatiya 'stage settings' ought to be the objective. When it is possible for non-academic philosophers to get into philosophy to do this, that is most desirable. But that shall not be a common phenomenon, and under such circumstances, make the departments of philosophy work towards it. Till now, the task of maintaining a Bharatiya Pariprekshya had been done by the spiritual leaders, other great minds etc. of our nation. It should have been the work of education, and ironically education just do not know that it is the fundamental work of Bharatiya education. Education ought to have been of assistance to our great minds, but education had been not only ignoring them, but also ridiculing them.

People from any discipline can organise research projects with the department of philosophy to do two things essentially. One, along with department of philosophy they can work towards conceptual clarity and related questions as required to them. Two, they can work towards creating a Bharatiya Pariprekshya in their stipulated field of studies. With these, they should design curriculum as required and go ahead. This should remain as an ongoing endeavour in our academia.

These, I shall suggest, ought to be primary initiative towards 'educating education, educating educational methodologies, and educating educational development'. ❑

(Professor of Philosophy, The Maharaja Sayajirao University of Baroda)

# Education and Development Process

❑ **Dr. A. K. Gupta**

Development is a wider meaning term. It states changes in positive direction in all walks of life. It cannot be worked upon without contribution of all. Participation of each one of us is important, whatever one contribute should not be overlooked or ignored. Everyone by doing according to his capabilities can do to his/ her best and make the Nation move on the path of development. Any model we can consider to study this impact may it be western or traditional or similar to Bhutanese model where happiness is given due importance.

Education provides everybody a tool to achieve this. A process in which everybody is trained to harness his/ her capabilities to contribute. Additionally it is moral duty of everybody to pay back to the system. Whatever model is suggested to study its impact. However the planning team has vital role to play. So our duties start right from the top.

Mere Political influence to twist the things may not be good in a perspective of course from other point of view it may look right e.g. Opening of an educational institution in a particular area may be a good example of this. Politicians may have their personal agenda or priorities which may not be in the interest of local people. Role of persons so called experts should be restricted to just put a stamp on the proceedings. A group of persons should not be treated just move ahead unimportant issues e.g. Deciding about furniture or staff etc is simply waste of time one can feel. More and more active participation in the movement is important. Thus an academician or so called expert should be given due importance based on his/ her subject knowledge and experience and that should be used for betterment rather than simply putting stamp on anything.

Distribution of money should not remain the only goal any group should be expected to do. But planning for betterment of a common person should be the aim. The basic objective should be to move ahead the society in an appropriate direction. Harnessing nature's gifts optimally may it be Solar power in terms of Non Conventional energy source applied to the area where it is available in abundant e.g. Solar panels for getting power generation or wind turbine to get energy source, petroleum products, steel grade lime, disaster management, presence of Bentonite in sub strata with varying moisture conditions to cause structural problems, Negative effects of wind or

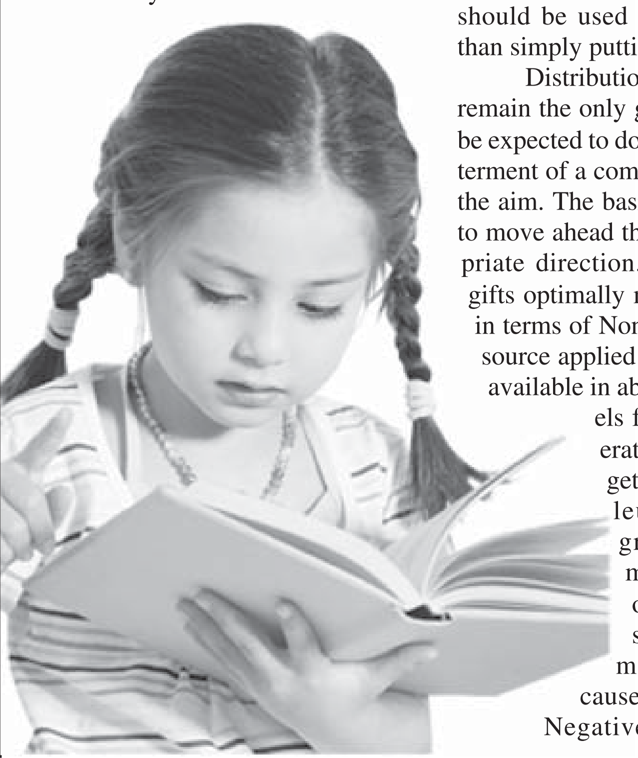

**If a common person is well aware about his duties then he can work in a better way for the bright future of the country. This time too Notebandi, as is frequently used term for demonetization, has brought the persons or groups who are in favour or against it, without even worrying small trouble in the larger benefits. The target group is different than it has been faced by many others. The target group as we know is hidden who is working against the interest of our country. Those who are not working in the interest of the Nation may like to use every opportunity to save the taxes which are otherwise are due and can be used for betterment of the society and nation.**

earthquakes on structures etc may some areas which needs focus to work up on.

Sarvajan Hitay Sarvajana Sukhay should be the objective of any education system. The present Prime Minister has driven the force in the right direction by calling all the forces to see their impetus according to their potential may he be teacher or a learner, It is basically up to the planning team to do so that the things move in auto mode in right direction. The area where one should focus i.e. by training them to do for the social benefit of all and at same time engaging their time and energy to streamline their efforts to get desired results in the interest of the society.

In a democratic system making voice of the masses in your favour remain a challenge getting their support depends on their participation and getting benefit for them only. A programme should be inculcated or supported to convert existing educational institution to get support from central government funding so as to get maximum benefits to local people may them be students or teachers/ staff and potentials should be applied to get maximum benefits for local problems and generate feeling for Nationhood. Anekta mein Ekta should be motto of all concerned. The main concern should be to focus on our traditional values by way of considering modern changes in the society may it be technical or financial or otherwise.

A person should not be restricted to think in a particular direction rather our education system should have enough flexibility to guide the person or student to move according to what nature has given to him/ her. Of course there may be some extra financial burden but benefit is multifold which should not be ignored. Thereby allowing a student to begin with a traditional course with potential to choose according to his/ her natural talent, thereby.

Equity remains a vital issue where the whole society should focus. No segment in the society should be left alone to fight for his/ her rights, Otherwise people are ready to approach and slowly try to convert them according to their needs. Therefore need of the hour is to focus on equity based up on the criteria one can work. Strata of the society termed backward on the basis of community or financial status or even on gender basis. Even after marriage one should forget the background one belonged to but continuous learning should be the objective of all.

Access is another important term which needs to be focused and understood. No one should be deprived of his/ her desire to learn at any moment of time. Situation of everybody is not the same. One may be forced to leave in between due to certain reasons but his/ her desire to continue in the field of study should be rewarded. The government efforts need to be focused on this point. It is only with the support of the Government that this can be made realistic.

Development through education and Development of educational system go hand in hand simultaneously. Efforts should be to train and develop self esteem in everybody. Needless to say that it basically development in everyone's character (personal qualities e.g. moral to eradicate bad traits in the society) so that it reflects when time demands so. Development is a continuous process which demands contribution of everyone.

No work should be treated as an object to look up on from as a lower job. Therefore, no job should be treated as a means of earning money. No person should be judged on the basis of how much money one possesses but more importantly how he/ she has earned it is far more important.

One should always be GOD fearing otherwise issues e.g. Shikshak Bharti Ghotala or Nivedita Menon speech are likely to surface and harass those who have done to the society in one way or other. It has become a usual practice to influence decision making power of the person/ s who are enjoying it. Common persons or Janta knows or understands, may be a little late. GOD not only has given power to digest everything but also to understand what is around us. A common sense prevails in everybody which makes them understand good separate from those are termed as bad one.

It is very simple to make fools of others and enjoy it for the time being smart ones but it hurts to find the damages one is earning for all those deeds which he is responsible for. Not doing the job assigned to you may give temporary happiness but in the end when whole system collapses then it becomes too late. Character of the Nation depends upon those who are forming it. So character of everybody affects, whether good or bad, to his/ her relatives, family, society and finally the Nation. In a short period of time it may give a different feeling but later on when one realises it become too late. ❑

(Professor, Structural Engineering Deptt., Faculty of Engg. and Architecture, JNV University, Jodhpur)

# शिक्षण का पैमाना

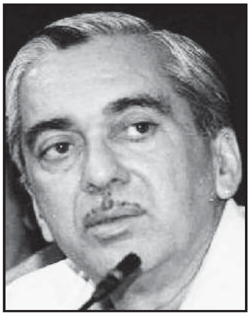

**वे लोग जो सुधार ला सकने की स्थिति में हैं, सरकारी स्कूलों की स्थितियों से प्रभावित नहीं होते। उनके बच्चों के लिए नामी-गिरामी निजी स्कूल उपलब्ध हैं। वे समय-समय पर शिक्षा की गुणवत्ता में हो रही गिरावट पर चिंता अवश्य प्रकट करते रहते हैं। विश्व के सौ या दो सौ उच्च शिक्षा संस्थानों और विश्वविद्यालयों में भारत की अनुपस्थिति पर भी चिंता प्रकट की जाती है। नए-नए उपाय भी सुझाए जाते हैं और उनमें से कुछ का क्रियान्वयन भी प्रारंभ किया जाता है, लेकिन परिवर्तन दिखाई नहीं देता है। शिक्षा की गुणवत्ता की धुरी 'कौन पढ़ाए' के आसपास ही घूमती है। देखा जाए तो इसका केंद्र बिंदु गांव का सरकारी स्कूल ही निकलेगा। जब वहाँ अध्यापक ही नहीं होंगे तब गुणवत्ता कहाँ से और कैसे आएगी?**

❑ **जगमोहन सिंह राजपूत**

शिक्षा में परिवर्तन और सुधार की राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय गोष्ठियों में अनेक बार पूरा परिदृश्य चार प्रश्नों में बाँटकर विश्लेषित किया जाता है- किसे पढ़ाएँ, क्या पढ़ाएँ, कैसे पढ़ाएँ और कौन पढ़ाएँ? पहले प्रश्न में बच्चे को जानना, समझाना, उसकी रुचियाँ, मनोविज्ञान इत्यादि सम्मिलित होगा। दूसरा होगा कि क्या और कितना उसे सिखाना है यानी विषयवस्तु और पूरा पाठ्यक्रम। तीसरा महत्त्वपूर्ण अवयव है विधा। इसमें शिक्षण विधियाँ, संचार तकनीक के उपयोग शामिल होंगे। चौथा होगा कि वह व्यक्ति कौन और कैसा होगा जो पढ़ाने के लिए उपयुक्त हो और उसके साथ ही अधिकृत भी हो। इस व्यक्ति की पहचान गुरुकुल के गुरु से प्रारंभ होकर मास्टर साहब तक पहुँची और आज संविदा अध्यापक, अतिथि अध्यापक, शिक्षा मित्र जैसे संबोधनों में सिमट गई है। जैसे गुरुकुल की संकल्पना बिना गुरु के नहीं हो सकती। वैसे ही क्या स्कूल बिना अध्यापकों के कहीं भी चल सकता है? भारत में बिना अध्यापकों के भी स्कूल चलते हैं। अगस्त 2016 में संसद को बताया गया कि देश में 1,05630 एकल अध्यापक वाले स्कूल हैं। कुछ दिन पहले ही लोकसभा में यह जानकारी भी दी गई कि सरकारी स्कूलों में अध्यापकों के 10,14,491 पद रिक्त हैं। ऐसे में देश के 30-35 हजार स्कूलों में अध्यापकों का किसी भी दिन स्कूल में न होना सामान्य घटना ही मानी जाएगी। प्रारंभिक स्कूलों में 17.5 प्रतिशत और माध्यमिक स्कूलों में 14.9 प्रतिशत पद खाली हैं। इन सारे पदों पर नियुक्ति का अधिकार केवल राज्य सरकारों के अधिकार क्षेत्र में ही आता है। केंद्र इसमें कुछ नहीं कर सकता है, वह समय-समय पर आर्थिक सहायता देता रहता है। वैसे केंद्रीय विश्वविद्यालयों में भी साल भर पहले तक 16,600 पद रिक्त थे। ऐसे आँकड़े पिछले कई वर्षों से देश के सामने आते रहे हैं। उन पर चर्चा भी होती रहती है।

हर बार हर स्तर पर आश्वासन दिए जाते हैं कि रिक्त पदों पर शिक्षकों की नियुक्तियाँ शीघ्र ही कर दी जाएँगी, मगर नतीजा वही ढाक के तीन पात रहता है। इसके पीछे के कारण भी सभी को ज्ञात हैं। वे लोग जो सुधार ला सकने की स्थिति में हैं, सरकारी स्कूलों की स्थितियों से प्रभावित नहीं होते। उनके बच्चों के लिए नामी-गिरामी निजी स्कूल उपलब्ध हैं। वे समय-समय पर शिक्षा की गुणवत्ता में हो रही गिरावट पर चिंता अवश्य प्रकट करते रहते हैं। विश्व के सौ या दो सौ उच्च शिक्षा संस्थानों और विश्वविद्यालयों में भारत की अनुपस्थिति पर भी चिंता प्रकट की जाती है। नए-नए उपाय भी सुझाए जाते हैं और उनमें से कुछ का क्रियान्वयन भी प्रारंभ किया जाता है, लेकिन परिवर्तन दिखाई नहीं देता है। शिक्षा की गुणवत्ता की धुरी 'कौन पढ़ाए' के आसपास ही घूमती है। देखा जाए तो इसका केंद्र बिंदु गांव का सरकारी स्कूल ही निकलेगा। जब वहाँ अध्यापक ही नहीं

होंगे तब गुणवत्ता कहाँ से और कैसे आएगी? प्रबंधन के आइआइएम जैसे संस्थानों के होते हुए भी हम अध्यापकों की नियुक्तियाँ करने में क्यों असमर्थ हैं? क्या इसका कारण व्यवस्था की इसमें रुचि न लेना ही है? अध्यापकों की तैयारी की ओर ध्यान देना केवल शिक्षा देने के लिए ही आवश्यक नहीं है। इसके अनेक पक्ष ऐसे हैं जो जाने-अनजाने जीवन के हर क्षेत्र में प्रभाव डालते हैं। शिक्षक प्रशिक्षण संस्थानों में यदि प्रशिक्षक अपने कर्त्तव्य का पूरी तरह पालन करता है तो हर प्रशिक्षु उसका अवलोकन करता है और वैसा ही बनने की ओर अग्रसर होता है। जब प्रशिक्षु अपने प्रश्न बिना हिचक प्रशिक्षक से पूछ सकता है तभी उसकी प्रतिभा जाग्रत होती है। वह स्कूलों में जाकर भी इस खुले वार्तालाप के महत्त्व को आधार बनाकर अपना कार्य करता है।

भारतीय संस्कृति और सभ्यता के परिचायक अनेक ग्रंथों में गुरु और आचार्य के संबंध में बहुत कुछ ऐसा लिखा गया है जो सदा ही स्वीकार्य और अनुकरणीय बना रहेगा। अन्य अनेक अपेक्षाओं के साथ वह उदार, संयमी और स्थिर चित्त वाला हो, ज्ञान एवं अध्यात्म के लिए सदा व्याकुल रहने वाला हो। हमारे शिक्षक प्रशिक्षक संस्थानों को उन ग्रंथों का अध्ययन कर और उनका सम-सामयिक संदर्भ में विवेचन कर सार-तत्व निकाल कर प्रशिक्षार्थियों को उपलब्ध कराना चाहिए। पंडित विद्यानिवास मिश्र के शब्दों में- 'आचार्य शब्द का बड़ा विशद अर्थ है: आचार्य वह है जो केवल स्वयं आचरण नहीं करता, बल्कि जो आचरण कराता है, केवल आचरण करने से आचार्य नहीं होगा। जो आचरण करे और दूसरों से आचरण कराए, स्वयं पढ़े, दूसरों से पढ़ाए, स्वयं तैयारी करे और दूसरों से तैयारी कराए वह आचार्य है।'

एक समय नालंदा, तक्षशिला, विक्रमशिला जैसे ज्ञान केंद्रों में साठ से अधिक देशों के ज्ञानार्थी आकर अपनी ज्ञान पिपासा शांत करते थे और मानवीय ज्ञान भंडार को और परिपुष्ट करने में अपना योगदान करते थे। स्वामी विवेकानंद ने सच्चे अध्यापक के लिए कहा था-'सच्चे आचार्य वही हैं जो अपने शिष्य की प्रवृति के अनुसार अपनी सारी शक्ति का प्रयोग कर सकते हैं। सच्ची सहानुभूति के बिना हम कभी भी ठीक-ठीक शिक्षा नहीं दे सकते। गुरु के साथ हमारा संबंध ठीक वैसा ही है जैसा पूर्वज के साथ वंशज का... जिन देशों में इस प्रकार के गुरु-शिष्य संबंध की उपेक्षा हुई है... वहाँ गुरु का मतलब रहता है अपनी दक्षिणा से और शिष्य का मतलब रहता है गुरु के शब्दों से। इसके बाद दोनों अपना-अपना रास्ता नापते हैं।' आज भारत में भी अधिकांश शैक्षिक संस्थाओं में इसी प्रकार की स्थिति बन गई है या बनती जा रही है। आज खुलेआम शिक्षा उद्योग पर नीतियाँ बनती हैं, गोष्ठियाँ होती हैं और लाभांश कमाने के नए रास्ते तलाशे जाते हैं। ऐसे में अध्यापकों के प्रशिक्षण में इन प्रवृतियों का परिचय कराना आवश्यक है। देश को ऐसे अध्यापक चाहिए जो पहले देश की ज्ञानार्जन परंपरा से परिचय प्राप्त करें और विश्व स्तर पर जो घटित हो रहा है उसे जानें। फिर दोनों के बीच जितना आवश्यक और उपयोगी हो उसमें समन्वय स्थापित करें। इसके लिए शिक्षकों के सेवा-पूर्व एवं सेवाकालीन प्रशिक्षण के संस्थान योग्यतम व्यक्तियों द्वारा संचालित हों, श्रेष्ठतम आचार्य वहाँ कार्य करें और समाज एवं सरकारें उन्हें सभी प्रकार के आवश्यक संसाधन तथा स्वायत्तता उपलब्ध कराएँ। शिक्षा सुधारों में इस समय सबसे अधिक प्राथमिकता का क्षेत्र शिक्षक प्रशिक्षण संस्थानों को जीवंत और सक्रिय बनाकर एक अनुकरणीय कार्यसंस्कृति को पुन: स्थापित करना ही है। ❑

(लेखक एनसीईआरटी के पूर्व निदेशक हैं)


## शैक्षिक मंथन मासिक सम्बन्धी विवरण

**घोषणा पत्र फार्म-4 ( नियम 8 के अनुसार )**

| | |
|---|---|
| 1. प्रकाशन स्थान | जयपुर |
| 2. प्रकाशन अवधि | मासिक |
| 3. मुद्रक का नाम | **महेन्द्र कपूर** |
| (क्या भारत का नागरिक है) | हाँ |
| | भारती भवन, बी-15, न्यू कॉलोनी, जयपुर (राज.) 302001 |
| 4. प्रकाशक का नाम | **महेन्द्र कपूर** |
| (क्या भारत का नागरिक है) | हाँ |
| | भारती भवन, बी-15, न्यू कॉलोनी, जयपुर (राज.) 302001 |
| 5. सम्पादक का नाम | **सन्तोष पाण्डेय** |
| (क्या भारत का नागरिक है) | हाँ |
| | डी-27, शांति पथ, तिलक नगर, जयपुर( राज.)302004 |

6. उन व्यक्तियों के नाम व पते जो समाचार पत्र की समस्त पूंजी के एक प्रतिशत से अधिक के हिस्सेदार हों। - **शैक्षिक मंथन संस्थान, जयपुर**

मैं महेन्द्र कपूर एतद् द्वारा घोषित करता हूँ कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिये गये विवरण सत्य हैं।

दिनांक 1.3.2017

ह0/-

प्रकाशक

# आर्यभट : महान खगोलीय प्रतिभा

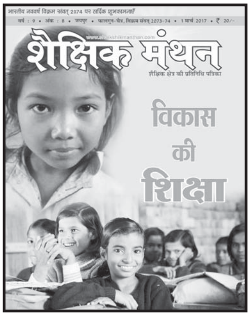


**आर्यभटीय संस्कृत काव्य रूप में रचित गणित एवं खगोलशास्त्र का एक छोटा-सा विशुद्ध ग्रंथ है। आर्यभटीय को विद्वान और प्रसिद्ध विज्ञान लेखक गुणाकर मुले प्रथम 'पौरुषेय' ग्रंथ मानते हैं। यहाँ पौरुषेय से अभिप्राय है मनुष्य द्वारा रचित, जबकि आर्यभटीय से पहले के ग्रंथ 'अपौरुषेय' थे, यानी आचार्यों द्वारा न लिखा होकर दैवीय प्रेरणा से मुग्ध होकर लिखे गए ग्रंथ। आर्यभट पुरानी अवैज्ञानिक मान्यताओं को तोड़ने वाले क्रांतिकारी गणितज्ञ और खगोलशास्त्री थे। आर्यभटीय में वर्णित सिद्धांत नवीन होने के साथ-साथ दूरदर्शी यथार्थ परिकल्पना भी थी।**

❑ **प्रदीप**

आर्यभट प्राचीन भारत के सर्वाधिक प्रतिभा संपन्न गणितज्ञ-ज्योतिषी थे। वर्तमान में पश्चिमी विद्वान भी यह स्वीकार करते हैं कि आर्यभट प्राचीन विश्व के एक महान वैज्ञानिक थे। यद्यपि हम आर्यभट का महत्त्व इसलिए देते हैं क्योंकि सम्भवतः वे ईसा की पाँचवी-छठी सदी के नवीनतम खगोलकी आन्दोलन के पुरोधा थे। और आर्यभट की बदौलत ही प्राचीन भारत में वैज्ञानिक चिन्तन की सैद्धांतिक परम्परा स्थापित हो पाई।

कभी-कभी हम आर्यभट को 'आर्यभट्ट' नाम से भी संबोधित करते हैं। परन्तु उनका सही नाम आर्यभट था। सर्वप्रथम भारतीय चिकित्सक एवं पुरातात्विक विद्वान डॉ. भाऊ दाजी ने यह स्पष्ट किया था कि उनका वास्तविक नाम आर्यभट है, ना कि आर्यभट्ट। आर्यभट को आर्यभट्ट लिखने के पीछे कुछ विद्वानों का तर्क है कि आर्यभट ब्राह्मण थे, अतः भट्ट शब्द का उपयोग किया जाना चाहिए। परंतु कुछ विद्वान 'भट' शब्द का अभिप्राय भूलवश 'भाट' समझते हैं, मगर भट शब्द का वास्तविक अभिप्राय 'योद्धा' से है। वास्तविकता में आर्यभट ने एक योद्धा की ही भांति धर्मशास्त्रों और प्राचीन लोकविचारों तथा परम्पराओं से धैर्यपूर्वक मुकाबला किया। गौरतलब है कि उनके ग्रंथ आर्यभटीय के टीकाकारों तथा अन्य पूर्ववर्ती ज्योतिषियों ने उन्हें 'आर्यभट' नाम से ही संबोधित किया है।

**जन्म, काल तथा संबंधित स्थान**

प्राचीन भारत के असंख्य पोथियों में उनके रचयिता तथा रचनाकाल के बारे में स्पष्ट जानकारी नहीं प्राप्त होती है। मगर महत्त्वपूर्ण बात यह है कि आर्यभट ने अपने समय के संबंध में सुस्पष्ट जानकारी दी है। आर्यभट ने अपने क्रांतिकारी कृतित्व 'आर्यभटीय' में यह जानकारी दी है कि उन्होंने इस ग्रन्थ की रचना 23 वर्ष की आयु में कुसुमपुर में की थी। आर्यभटीय के एक श्लोक में वे बताते हैं कि ''कलियुग के 3600 वर्ष बीत चुके हैं और अब मेरी आयु 23 वर्ष है।'' भारतीय ज्योतिषीय काल गणना के अनुसार कलियुग का आरंभ 3101 ईसा पूर्व में हुआ था। कलन से विद्वानों ने यह निष्कर्ष निकाला कि आर्यभटीय की रचनाकाल 499 ई. है। इससे यह स्पष्ट होता है कि आर्यभट का जन्म 476 ई. में हुआ होगा। अपने जन्मकाल की सुस्पष्ट सूचना देने वाले आर्यभट प्राचीन भारत के संभवतः पहले वैज्ञानिक थे।

हमें आर्यभट के माता-पिता, भाई-बहन, गुरु इत्यादि के बारे में कोई जानकारी प्राप्त नहीं है। यहाँ तक कि उनके जन्म स्थान के बारे में भी विद्वानों में आपसी मतभेद है। पहले विद्वानों का यह मत था कि आर्यभट का जन्म या तो पाटलिपुत्र (वर्तमान पटना) में हुआ था या कुसुमपुर (पुष्पपुर) में। कुछेक विद्वानों के मतानुसार पाटलिपुत्र ही कुसुमपुर था। ऐतिहासिक स्रोतों से ज्ञात होता है कि पाटलिपुत्र के निकट आर्यभट की वेधशाला थी। आर्यभटीय के टीकाकार नीलकंठ सोमयाजी के अनुसार आर्यभट का जन्म आश्मक जनपद में हुआ था। नीलकंठ और भास्कर प्रथम के अनुसार आर्यभट आश्मक जनपद (वर्तमान में महाराष्ट्र) से पाटलिपुत्र आए थे। आश्मक जनपद से होने के कारण उन्हें 'आश्मकाचार्य' और उनके ग्रंथों को 'आश्मकतंत्र' के नाम से भी जाना जाता है।

**उत्कृष्ट कृति : आर्यभटीय**

ज्ञातव्य ऐतिहासिक साक्ष्यों के अनुसार आर्यभट ने कुल तीन ग्रन्थों की रचना की थी। जिनमे से तीन ग्रन्थ दशगीतिका, आर्यभटीय एवं तन्त्र के बारे में वर्तमान में जानकारी उपलब्ध हैं। कुछ विद्वानों के मतानुसार उन्होंने 'आर्यभट सिद्धांत' नाम से एक और ग्रन्थ की रचना की थी, परन्तु वर्तमान में इस ग्रन्थ के मात्र 34 श्लोक ही उपलब्ध हैं। इन 34 श्लोकों में आर्यभट ने खगोलीय यंत्रों के बारे में जानकारी दी है। कुछ इतिहासकारों के अनुसार आर्यभट ने एक-दो ग्रन्थों की रचना और

की थी। बहरहाल, आर्यभट की सर्वाधिक प्रसिद्ध एवं क्रांतिकारी कृतित्व 'आर्यभटीय' है। इस कृति के पद्य शैली और सूत्र शैली में होने के कारण इसका खूब प्रचार हुआ। परन्तु मध्यकाल तक आते-आते कई सदियों तक आर्यभटीय ग्रन्थ लुप्तप्राय रहा। वर्ष 1865 में डॉ. भाऊ दाजी ने आर्यभटीय की तीन ताड़पत्र पांडुलिपियों को ढूँढ़ निकाला। डॉ. भाऊ दाजी ने आर्यभट एवं आर्यभटीय पर गहन अध्ययन एवं शोध करने के पश्चात 'जर्नल ऑफ रॉयल एशियाटिक सोसाइटी' में एक शोधपत्र प्रकाशित करवाया। तब जाकर लोगों को आर्यभट और उनके कृति के बारे में प्रथम प्रामाणिक जानकारी प्राप्त हुई। यूरोपीय विद्वान हैंड्रिक केर्ण ने आर्यभटीय की मलयालमी पांडुलिपियों का उपयोग करके पहली बार वर्ष 1874 में नीदरलैंड से मुद्रित एवं परमेश्वर के टीका सहित प्रकाशित करवाया। वर्ष 1930 में शिकागो यूनिवर्सिटी प्रेस ने फ्रांसीसी भाषा में आर्यभटीय का प्रकाशन किया। पण्डित बलदेव मिश्र ने हिंदी व्याख्या सहित आर्यभटीय को वर्ष 1966 में पटना में प्रकाशित करवाया।

आर्यभटीय संस्कृत काव्य रूप में रचित गणित एवं खगोलशास्त्र का एक छोटा-सा विशुद्ध ग्रंथ है। आर्यभटीय को विद्वान और प्रसिद्ध विज्ञान लेखक गुणाकर मुले प्रथम 'पौरुषेय' ग्रंथ मानते हैं। यहाँ पौरुषेय से अभिप्राय है मनुष्य द्वारा रचित, जबकि आर्यभटीय से पहले के ग्रंथ 'अपौरुषेय' थे, यानी आचार्यों द्वारा न लिखा होकर दैवीय प्रेरणा से मुग्ध होकर लिखे गए ग्रंथ। आर्यभट पुरानी अवैज्ञानिक मान्यताओं को तोड़ने वाले क्रांतिकारी गणितज्ञ और खगोलशास्त्री थे। आर्यभटीय में वर्णित सिद्धांत नवीन होने के साथ-साथ दूरदर्शी यथार्थ परिकल्पना भी थी।

आर्यभटीय में कुल 121 संस्कृत श्लोक हैं, जो चार पादों या भागों में विभाजित हैं। ये चार भाग हैं- दशगीतिकापाद, गणितपाद, कालक्रियापाद और गोलपाद।

**दशगीतिकापाद** - यह आर्यभटीय के चार भागों में से सबसे छोटा भाग है। इसमें कुल 13 श्लोक हैं। इनमें से 10 श्लोक गीतिका छंद में है, इसलिए इस भाग को 'दशगीतिका सूत्र' के नाम से भी जाना जाता है। इस भाग के प्रथम श्लोक में ब्रह्म और परब्रह्म की वंदना है। आगे के एक ही श्लोक में आर्यभट अक्षरों द्वारा संख्याओं को लिखने की अपनी नवीन अक्षरांक पद्धति को प्रस्तुत करते हैं। शेष श्लोकों में आर्यभट ने सूर्य, चन्द्रमा, पृथ्वी, शनि, बृहस्पति, शुक्र और बुध के चक्कर (भ्रमण) और कल्प, महायुग एवं त्रिकोणमिति इत्यादि की चर्चा की है।

**गणितपाद** - इस भाग में अंकगणित, बीजगणित और रेखागणित पर संक्षिप्त में चर्चा की गयी है। इसमें कुल 33 श्लोक हैं। इसके श्लोकों में वर्ग, वर्गमूल, घन, घनमूल, त्रिभुज का क्षेत्रफल, त्रिभुजाकार शंकु का क्षेत्रफल, वृत्त का क्षेत्रफल, वृत्त की त्रिज्या, गोले का आयतन, समान्तर श्रेणी, चार दशमलव अंकों तक पाई का शुद्ध मान आदि का गणितीय विवेचन किया गया है।

**कालक्रियापाद** - कालक्रियापाद का अभिप्राय है - काल गणना। इस भाग में कुल 25 श्लोक हैं। इसमें काल एवं वृत्त के विभाजन और मासों, वर्षों, युगों, महायुगों के सम्बन्ध में बताया गया है। इसके 20 श्लोक ग्रहीय गतियों तथा खगोलशास्त्र सम्बन्धी अन्य विषयों पर केन्द्रित है।

**गोलपाद** - यह सर्वाधिक प्रसिद्ध, सबसे बड़ा एवं ग्रन्थ का अंतिम भाग है। इस भाग में कुल 50 श्लोक हैं। इसमें खगोल के विभिन्न वृत्तों को समझाया गया है और ग्रहों, चन्द्रमा और पृथ्वी के गतियों को स्पष्ट किया गया है। इसी भाग में आर्यभट ने ग्रहणों के सही कारण एवं अन्य नवीनतम खगोलीय अवधारणाओं को प्रस्तुत किया है। जिसके बारे में आगे चर्चा करेंगे।

**आर्यभट की क्रांतिकारी अवधारणाएँ**- आर्यभटीय के रचयिता के रूप में, आरंभ में आर्यभट का बहुत सम्मान रहा। उनके ग्रन्थ में नवीन एवं युगांतरकारी अवधारणाएँ थी, जिसके कारण आर्यभट बहुत जल्द ही मशहूर हो गये। आइए, आर्यभट की कुछ प्रमुख अवधारणाओं पर चर्चा करते हैं-

आर्यभट ने हजारों वर्ष पुराने इस विचार का खंडन कर दिया कि हमारी पृथ्वी ब्रह्माण्ड के मध्यभाग में स्थिर है। आर्यभट ने भूभ्रमण का सिद्धांत प्रस्तुत किया, जिसके अनुसार पृथ्वी अपने अक्ष पर घूर्णन करती है। इसका विवरण आर्यभट गोलपाद में निम्न प्रकार से देते हैं-

अनुलोमगतिनौंस्थः पश्यत्यचलम्
विलोमंग यद्वत्।
अचलानि भानि तद्वत्
समपश्चिमगानि लंकायां॥

''लंका में स्थित मनुष्य नक्षत्रों को उल्टी ओर (पूर्व से पश्चिम) जाते हुए देखता है उसी भांति से चलती नाव में बैठे मनुष्य को किनारे स्थित वस्तुओं की गति उल्टी दिशा में प्रतीत होती है।''

पृथूदकस्वामी आर्यभट की एक आर्या के बारे में लिखते हैं-

भपंजरः स्थिरो भूरेवावृत्यावृत्य प्राति दैविसिकौ।
उदयास्तमयौ संपादयति नक्षत्रग्रहाणाम्॥

''तारामंडल स्थिर है और पृथ्वी अपनी दैनिक घूर्णन गति से नक्षत्रों तथा ग्रहों को उदय एवं अस्त करती है।''

आर्यभट ने सूर्य से विविध ग्रहों के दूरियों को बताया, जो वर्तमान वैज्ञानिक माप से काफी मिलता-जुलता है।

आर्यभट ने स्थिर तारों के सापेक्ष पृथ्वी का अपने अक्ष पर घूर्णन-काल की गणना 23 घंटे 56 मिनट और 4.1 सेकेण्ड की थी। आधुनिक गणना के अनुसार पृथ्वी अपने अक्ष पर 23 घंटे 56 मिनट और

4.091 सेकेण्ड में घूर्णन करती है। इससे यह स्पष्ट है कि आर्यभट की गणना शुद्धता के बहुत निकट है। ध्यातव्य है कि आर्यभट के परवर्ती गणितज्ञों ने भी पृथ्वी के घूर्णन-काल की गणना की थी, परन्तु आर्यभट की गणना उनकी तुलना में अत्यधिक सटीक थी। आर्यभट ने एक वर्ष को 365.25868 दिनों, एक चंद्र मास को 27.32167 दिनों का माना। जबकि आधुनिक गणना के अनुसार क्रमशः मान 365.25636 दिन और 27.32166 दिन है, जोकि शुद्धता के काफी निकट है।

आर्यभट ने गोलपाद में बताया कि जब पृथ्वी की विशाल छाया चन्द्रमा पर पड़ती है, तो चन्द्रग्रहण होता है। उसी प्रकार, जब चन्द्रमा, सूर्य एवं पृथ्वी के बीच आ जाता हैं और वह सूर्य को ढक लेता है, तब सूर्यग्रहण होता हैं। आर्यभट ने ग्रहणों की तिथि तथा अवधि के आकलन का सूत्र भी प्रदान किया।

आर्यभट ने महायुग अर्थात्, सतयुग, त्रेता, द्वापर और कलियुग को चार समान भागों में विभाजित किया। उन्होंने मनु की भांति 4 : 3 : 2 : 1 में नही विभक्त किया। उन्होंने 1 कल्प में 14 मन्वन्तर और 1 मन्वन्तर में 7 महायुग माना। एक महायुग में चारों युगों को एक समान माना।

आर्यभट ने बड़ी-बड़ी संख्याओं को अक्षरों के समूहों में निरूपित करने की नई अक्षरांक पद्धति को जन्म दिया। उन्होंने इसी शैली में आर्यभटीय की रचना की है। आर्यभटीय के एक श्लोक से यह भी स्पष्ट है कि वे नई स्थानमान अंक पद्धति से परिचित थे। अत: वे शून्य से भी परिचित थे।

आर्यभट ने वृत्त की परिधि और उसके व्यास के अनुपात पाई का मान 3.1416 कलित किया जोकि दशमलव के चार अंकों तक ठीक है। आर्यभट यह जानते थे कि पाई एक अपरिमेय संख्या है, इसलिए उन्होंने अपने मान को सन्निकट माना।

आर्यभट गोलीय त्रिकोणमिति की अवधारणाओं से भलीभांति परिचित थे। उन्होंने अर्ध ज्याओं के मान 3,45 के अंतर पर दिए, जो आधुनिक त्रिकोणमिति के सिद्धांतों के काफी अनुरूप हैं। वर्तमान में प्रचलित 'साइन' और 'कोसाइन' आर्यभटीय के 'ज्या' और 'कोज्या' ही हैं। आज सम्पूर्ण विश्व में जो त्रिकोणमिति पढ़ाया जाता है, वास्तविकता में उसकी खोज आर्यभट ने की थी।

आर्यभट ने ब्रह्मांड को अनादि-अनंत माना। भारतीय दर्शन के अनुसार अग्नि, जल, वायु, पृथ्वी और आकाश इन पांच तत्वों के मेल से इस सृष्टि का सृजन हुआ है परन्तु आर्यभट ने आकाश को तत्व नहीं माना। इत्यादि !!!

**आर्यभटीय पर टीकाएँ और आलोचनाएँ**

आर्यभटीय ग्रंथ दुरूह एवं संक्षिप्त है और सूत्रबद्ध शैली में लिखा होने के कारण टीका (भाष्य) बिना समझना बहुत कठिन है। इस ग्रंथ की रचना के बाद समकालीन तथा परवर्ती ज्योतिषियों ने 12 टीकाएँ लिखीं। आर्यभटीय की सबसे प्राचीनतम टीका जो हमारे पास उपलब्ध है वह है - भास्कर प्रथम का 'आर्यभट तंत्र भाष्य', जिसे उन्होंने 629 ई. में, वल्लभी (वर्तमान महाराष्ट्र) में लिखा। आर्यभट के शिष्यों के बारे जानकारी देते हुए भास्कर ने लिखा है कि पांडुरंगस्वामी, लाटदेव (महान गणितज्ञ) और नि:शंकु ने आर्यभट के चरणों में बैठकर ज्योतिष विद्या अर्जित की थी। भास्कर के बाद भारत में कई गणितज्ञ-ज्योतिषी हुए मगर उनके मुकाबले का कोई भी नहीं हुआ।

आर्यभट के सौ वर्षों बाद एक महान गणितज्ञ-ज्योतिषी हुए -ब्रह्मगुप्त। ब्रह्मगुप्त ने आर्यभट की आपत्तिजनक शब्दों में कड़वी आलोचना की। ब्रह्मगुप्त ने आर्यभट के भूभ्रमण सिद्धांत, ग्रहण के सही कारण और आर्यभट के युग विभाजन पद्धति आदि की आलोचना एवं उपेक्षा की। विद्वान अल्बरूनी ने लगभग 13 वर्षों तक भारत में रहकर भारतीय संस्कृति, गणित एवं खगोलशास्त्र का व्यापक अध्ययन किया। उन्होंने ब्रह्मगुप्त के आलोचनाओं को गलत एवं आपत्तिजनक माना साथ ही आर्यभट की बुद्धि का भी लोहा माना।

आर्यभट तथा उनके शिष्यों द्वारा की गयी तिथि गणना पर आधारित पंचांग भारत में खूब प्रचलित रहे हैं। आर्यभट के ही कार्यों के आधार पर प्रसिद्ध गणितज्ञ व वैज्ञानिक उमर ख्याम ने जलाली पंचांग प्रस्तुत किया था।

**आर्यभट को आदरांजलि**

आर्यभट की उपलब्धियों को विशेष रूप से उनके कृति आर्यभटीय को महानतम ज्योतिषीय कार्यों के रूप में जाना जाता है। आर्यभट का चिंतन एक गणितज्ञ-ज्योतिषी के रूप में इतना महत्त्वपूर्ण था कि प्रथम भारतीय उपग्रह 'आर्यभट' को उनके सम्मान में उनके नाम पर रखा गया। जिसे सोवियत संघ के एक रॉकेट के द्वारा 19 अप्रैल, 1975 में प्रक्षेपित किया गया था। भारत, दुनिया पहला ऐसा देश है जिसने अपने पहले कृत्रिम उपग्रह को किसी काल्पनिक देवी-देवता का नाम नही दिया, बल्कि अपने एक महान गणितज्ञ का नाम दिया।

चन्द्रमा पर उपस्थित एक बड़ी दरार (गड्ढ़े) का नाम आर्यभट रखा गया है। यही नहीं भारतीय अन्तरिक्ष अनुसंधान संगठन (इसरो) द्वारा बैलून से किए गये एक अनोखे प्रयोग में समतापमंडल की वायु में जीवाणुओं की ऐसी प्रजातियाँ पाई गई है जिसे पृथ्वी पर पहले कभी देखा नहीं गया था। उनमें से एक जीवाणु का नाम आर्यभट के सम्मान में 'बैसिलस आर्यभट' रखा गया। खगोल भौतिकी से सबंधित नैनीताल के निकट स्थित एक संस्थान को आर्यभट के सम्मान में 'आर्यभट प्रेक्षण विज्ञान अनुसंधान संस्थान' रखा गया है। ❑

# जब तक खुद का ध्यान रहेगा

**भोग के साथ त्याग की प्रवृत्ति को जहाँ पश्चिम विरोधाभास मानता है, वहीं भारत इसे ही जीवन का 'वैभव' कहता है । भोग के साथ-साथ त्याग के पथ पर चलते हुए जब हम पूर्णतया उस ईश्वर में रच-बस जाते हैं, जिसके कारण हमें इस जगत् का अनुभव होता है, तो हम 'परम वैभव' की स्थिति में आ जाते हैं। इस स्थिति में हमारे लिए करणीय और अकरणीय के औचित्य का प्रश्न रह ही नहीं जाता, क्योंकि जो भी हम करेंगे या नहीं करेंगे- वह इस संसार को व्यष्टि से समष्टि की ओर ले जाने वाला ही होगा। 'परम वैभव' की यही अवधारणा हमें 'भारतीय' बनाती है। एक ऐसा भारतीय ही सच्चा भारतीय है, जो अपने जीवन में व्यक्ति से परिवार, परिवार से समाज, समाज से राष्ट्र और राष्ट्र से विश्व के कल्याण के पथ को आलोकित करता हुआ चलता है ।**

❑ **सुरेन्द्र डी. सोनी**

जब कोई किसी के लिए कहता है कि वह वैभव से परिपूर्ण है, तो इसका सीधा सा अर्थ यह लगाया जाता है कि उसके पास देश, काल और परिस्थिति के अनुसार पर्याप्त धन-सम्पदा है और इस कारण भौतिक सुख-सुविधाओं के समस्त प्रचलित साधन आसानी से उसकी पहुँच में हैं। इसे दूसरे रूप में इस प्रकार कहा जा सकता है कि जिस व्यक्ति के पास 'भोग' के मार्ग पर चलने के अनेक विकल्प उपस्थित हों, उसका जीवन वैभव से युक्त होता है। लेकिन नहीं, यही वैभव नहीं है। यह तो वैभव की अत्यन्त सतही अवधारणा है। 'वैभव' का प्रत्यय इतने सरलीकृत रूप में नहीं समझा जा सकता। यह तो पश्चिम से आया विकार है कि हम वैभव को केवल 'भोग' से सम्बद्ध करने लगे हैं। भारतीय परिप्रेक्ष्य में वैभव का वास्तविक स्वरूप भौतिक है ही नहीं। भारतीय परिप्रेक्ष्य में वैभव का वास्तविक स्वरूप तो आध्यात्मिक है। हमारे यहाँ 'भोग' की प्रवृत्ति सीधे-सीधे निवृत्ति से जुड़ी हुई है। भारतीय जीवन-शैली में 'भोग' का तिरस्कार नहीं, बल्कि भोग का परिष्कार है। हमें सिखाया गया है कि बेशक हम भोग करें, पर त्याग के साथ करें। 'ईशावास्योपनिषद्' में 'भोग' के विषय में जो कहा गया है, वह हमारी संस्कृति का प्रतिनिधि दर्शन है। 'ईशावास्योपनिषद्' के अनुसार इस ब्रह्माण्ड में जो भी चराचर जगत् तुम्हें अनुभव हो रहा है, वह सब ईश्वर से व्याप्त है और किसी भी रूप में तुम्हें इसके प्रति आसक्त होने की आवश्यकता नहीं है। यह मानते हुए कि यहाँ कुछ भी तुम्हारा नहीं है, जो है- वह सब ईश्वर का है, तुम त्यागपूर्वक इसे भोगते रहो। जब हमारा कुछ है ही नहीं, हमने कुछ उत्पन्न ही नहीं किया। जो है- वह पहले से ही उपस्थित है, तो उसका भोग करना हमारा अधिकार कैसे हो सकता है ? हमें तो ईश्वर के प्रति आभारी होना चाहिए कि हमारे जीने का आधार, जीने की वजह केवल और केवल उसी के कारण है। यदि हम प्राकृतिक साधनों अथवा उनसे प्राप्त उत्पादों का भोगोपभोग करके स्वयं को वैभवशाली घोषित करते हैं, तो यह ईश्वर को नकारने और उसे चुनौती देने के समान है।

प्रकृति के विरुद्ध खड़े होकर अपने वैभवशाली होने की घोषणा करने का तो सीधा-सा अर्थ यही निकलता है कि मनुष्य अपनी बुद्धि, अपने विवेक की सही दिशा प्राप्त नहीं कर पाया है। बुद्धि-विवेक का सही दिशा प्राप्त न कर पाना किसी को वैभवशाली कैसे बना सकता है? बुद्धिमान् या विवेकशील होना ही तो मनुष्य को 'मनुष्य' बनाता है। बुद्धिमान् और विवेकशील वही है, जो यह सीख ले कि भोग और त्याग के साथ-साथ जीये बिना किसी प्रकार के वैभव की कल्पना नहीं की जा सकती। हाँ, छद्म बौद्धिकता के भार से दबा कोई व्यक्ति, जिसे केवल भोग में ही वैभव नजर आता हो, यह अवश्य कहेगा कि इस विरोधाभास के साथ कैसे जीया जा सकता है कि हम भोग भी करें और त्याग भी करें। गम्भीरता से विचार करें, तो पश्चिम से उठा यही प्रश्न आज संसार को संकट में डाले हुए है।

भोग के साथ त्याग की प्रवृत्ति को जहाँ पश्चिम विरोधाभास मानता है, वहीं भारत इसे ही जीवन का 'वैभव' कहता है। भोग के साथ-साथ त्याग के पथ पर चलते हुए जब हम पूर्णतया उस ईश्वर में रच-बस जाते हैं, जिसके कारण हमें इस जगत् का अनुभव होता है, तो हम 'परम वैभव' की स्थिति में आ जाते हैं। इस स्थिति में हमारे लिए करणीय और अकरणीय के औचित्य का प्रश्न रह ही नहीं जाता, क्योंकि जो भी हम करेंगे या नहीं करेंगे- वह इस संसार को व्यष्टि से समष्टि की ओर ले जाने वाला ही होगा। 'परम वैभव' की यही अवधारणा हमें 'भारतीय' बनाती है। एक ऐसा भारतीय ही सच्चा भारतीय है, जो अपने जीवन में व्यक्ति से परिवार, परिवार से समाज, समाज से राष्ट्र और राष्ट्र से विश्व के कल्याण के पथ को आलोकित करता हुआ चलता है। वह जानता है कि यदि दूसरा भूखा है, तो उसे अपना पेट भरने का अधिकार नहीं है। वह जानता है कि गाय के दूध पर पहला हक उसकी संतति का है। वह यह

भी जानता है कि धरती पर फैला जंगल, नदियों से बहता पानी, सूरज से आता प्रकाश, चाँद से झरती शीतलता जैसी किसी भी निधि पर उसका अधिकार नहीं है। सच्चा भारतीय 'ऋग्वेद' में वर्णित विज्ञान का यह सूत्र भी जानता है कि सृष्टि की स्वाभाविक व्यवस्था 'ऋत' है और इसमें आया तनिक व्यवधान भी सम्पूर्ण लौकिक-अलौकिक तंत्र में विक्षोभ उत्पन्न कर सकता है। सृष्टि की महिमा, उसके गौरव और उसके ऐश्वर्य को सामने एक मनुष्य के लोभ का क्या मोल है- इस बिंदु पर यदि पश्चिम विचार कर ले, तो उसे वैश्वीकरण और भूमण्डलीकरण का वास्तविक अर्थ समझ में आ जाए। ऐन्द्रिक सुख के लिए सम्पूर्ण पारिस्थितिकी तंत्र को नष्ट-भ्रष्ट करने के जिस प्रतिगामी आन्दोलन में वह निरत है, नहीं लगता कि उसे 'परम वैभव' की भारतीय अवधारणा आसानी से समझ में आ जाएगी। यही संकट तो इस समय संसार के समक्ष उपस्थित है कि ऐन्द्रिक सुख के पीछे विक्षिप्त हुआ पश्चिमी व्यक्ति बारूद के जिस जखीरे पर बैठकर इतरा रहा है, वह कब इस दुनिया को नष्ट कर दे - कहा नहीं जा सकता। पश्चिम का दिग्भ्रमित हो जाना तो मानवता के समक्ष एक संकट है ही, लेकिन इससे भी बड़ा संकट यह है कि वसुधा का पौर्वात्य खण्ड भी पश्चिम के प्रभाव में आ गया है। यहाँ भी कुछ लोग वैभव का अर्थ उसी सतही रूप में लेने लगे हैं, जिस रूप ने यूरोप और अमेरिका को पतन की खाई में लगभग धकेल ही दिया है।

धरती का पौर्वात्य खण्ड अपना वैभव, परम वैभव कैसे सुरक्षित रखे, यह चिन्ता अगर आज नहीं की गई - तो वह समय कभी नहीं आएगा, जब इस दुनिया को बचाया जा सकेगा। आखिर वह कौनसा बिंदु है, जहाँ से प्रारम्भ करके हम सभ्यता के गौरव, हमारे वैभव को बचाने के आन्दोलन को प्रारम्भ कर सकें ? सबसे पहले हमें पश्चिम का अनुसरण करना बंद करना होगा। क्या हम भी इसी होड़ में लग जाएँ कि पर्यावरण के वास्तविक स्वरूप की चिन्ता किए बिना सिर्फ पेड़ लगाने, विषाक्त गैसों का उत्सर्जन रोकने का दिखावा करने और ग्रीनहाउस इफेक्ट की बातें करके अपना कर्तव्य पूर्ण हुआ मान लें ? क्या हम भी परिवार के वास्तविक स्वरूप की अवहेलना करके न्यूक्लियर और माइक्रो न्यूक्लियर फैमिलीज को श्रेष्ठ मान लें ? क्या हम भी रचनात्मक विकास के आदर्श का उल्लंघन करके आयात-निर्यात संतुलन को बनाए रखने के लिए हथियारों का व्यापार करें ? पर्यावरण हमारे लिए केवल पेड़ लगाने या ओजोन-परत के क्षरण की बातें करना ही नहीं है। भारत का वैभव केवल भौतिक पर्यावरण का एक विचार मात्र नहीं, अपितु 'आभ्यंतरिक पर्यावरण' का दर्शन है, जिसके अन्तर्गत मनुष्य और मनुष्य के बीच मधुरतम सम्बन्धों की स्थापना करना इस समाज का परम लक्ष्य होता है। हमारा वैभव परिवारों को तोड़कर व्यक्तियों को आत्मकेंद्रित करके पागलपन की ओर उन्मुख कर देने में नहीं है। हमें नई पीढ़ी को सिखाना होगा कि घर आखिर 'घर' होता है, देश आखिर 'देश' होता है और राष्ट्र आखिर 'राष्ट्र' होता है। हमारे नीति-नियन्ताओं को यह मान लेना चाहिए कि भारत का 'वैभव' इसी में सुरक्षित रहेगा कि हम 'ब्रेन ड्रेन' के स्थान पर 'ब्रेन गेन' की नीति पर चलें। हम अपने बच्चों को समझाएँ कि 'मैं' और 'अखिल विश्व' को जोड़ने वाली कड़ी है हमारा देश, हमारा राष्ट्र। उन्हें बताना जरूरी है कि पश्चिम का यह सिद्धांत कि 'मैं ही सुखी हो जाऊँ' - एक दिन उनके 'नेशन स्टेट' की अवधारणा को खण्डित कर देगा। भारत की राष्ट्र के सम्बन्ध में जो कल्पना है, उसका आधार 'मैं' नहीं 'सम्पूर्ण वसुधा का कुटुम्ब' है। भारत ही जानता है कि मैं ही सुखी हो जाऊँ- इस चिंतन में वैभव नहीं है। 'वैभव' तभी है, जब सभी सुखी हो जाएँ। यही वह मूल भावना है, जो हमें पश्चिम के मिथ्या वैश्वीकरण और छद्म लोकतंत्र की अवधारणा से अलग करती है। भारत के अतिरिक्त दुनिया के किसी देश में नहीं कहा गया है कि जो व्यक्ति करुणा, त्याग और प्रेम की भावना से रहित जीवन जीता है - वह इस वसुधा के कुटुम्ब का सदस्य नहीं है। हमारा 'राष्ट्र' 'नेशन स्टेट' नहीं है। हमारा राष्ट्र दूसरों को कुचलने की भावना का प्रतिनिधित्व नहीं करता। हमारे राष्ट्र का वैभव इसी में है कि हम व्यक्ति के कल्याण की शपथ लेकर आगे बढ़ें और राष्ट्र का हित-चिंतन करते हुए समस्त विश्व के कल्याण के लक्ष्य को प्राप्त करें। यही वह अभीष्ट है, जिसे पाने के लिए स्वामी विवेकानंद कहते हैं कि हम चलते रहें, चलते रहें और अपने लक्ष्य की प्राप्ति तक, परम वैभव की प्राप्ति तक थकें नहीं, थमें नहीं।

पश्चिम के तथाकथित उदारवादी लोकतन्त्र की यह अवधारणा इस धरती पर रहने वाले लोगों पर बहुत भारी पड़ने वाली है, जिसकी आड़ में फुकोयामा ने कह दिया कि इसके आगे का मार्ग बंद है, क्योंकि मानव-कल्याण के पथ पर चलने के इतिहास का अंत हो चुका है। परम वैभव का आदर्श केवल 'भोग' पर आधारित व्यवस्था का कभी समर्थन नहीं करता। पश्चिम जिस उदारवाद की बात करता है, वह असल में उदारवाद नहीं 'उधारवाद' है, जिसकी इमारत केवल परिग्रह की बुनियाद पर टिकी है। हमें इस बुनियाद पर चोट करनी होगी, ताकि वे लोग इस संसार को भोगोपभोग के नरक में न ले जा सकें। 'उधारवाद' की बुनियाद को गिराकर ही हम इस संसार के लोगों के हृदय में परम वैभव का भाव जगा सकेंगे। नीरज की ये पंक्तियाँ परम वैभव का वास्तविक स्वरूप उद्घाटित करती हैं -

**जितना कम सामान रहेगा,**
**सफर उतना आसान रहेगा ।**
**उससे मिलना नामुमकिन है,**
**जब तक खुद का ध्यान रहेगा।।**

(व्याख्याता इतिहास - राजकीय लोहिया महाविद्यालय, चुरू, राजस्थान)

Part-III

## Indian Technical Education System

# Education in IITs in Today's

❑ Prof. C.V.R. Murty

**India has to build a competitive edge over other emerging economies with its strategic research outcomes, patented technologies, surge in innovation, high productivity of human resources, reduced cost of products, and high quality products and services, to ensure economic growth of India. Premier institutes of technology have the onus to shoulder responsibilities in this major national crusade; they have to take seriously this clarion call for re-casting afresh the model of technical education... and make the graduates competent, but not just qualified.**

**12. THE ROAD AHEAD…**

India's Grand Challenges are technically complex, and need STATE-OF-THE-ART Knowledge, Skills and Technologies to overcome. But, India lacks of education in both good Quality and Quantity. For instance, to support India's ~1,300,000,000 population, we have only a handful (<~10) of persons in each subject in the entire country, who are available to serve the needs of the nation with no other major responsibility. Clearly, the urgent need of the nation is quality education. India needs more people to address the tough conditions of India, and to help meet the basic needs of communities (namely food, shelter, clothing, education and health). In the context of India's youth thinking of migrating to some of the industrialized nations worldwide, it is important to remind them that Indians' contributions abroad will be INCREMENTAL, while their contributions in India will be MONUMENTAL. The only way India can provide education to its large population is by increasing quality in every facet of its education system – teachers, facilities, and administration (Figure 13).

As a human being in the context of the new world that we live in, it is essential to ensure that, irrespective of one's values, one still needs to do something for the society… This concept of Eusociality is paramount to development of a sustainable world human order. To examine whether we are meeting this bottom line, we need to constantly ask ourselves three questions:

(1) Are we Civilised?
(2) Are we Modernised?, and
(3) Are we Globalised?

Each of these three requirements points out to the need for building people who are human – who have the habit of giving unconditionally for the good of others…

While examining the coexistence of Body and Self, it is understood that

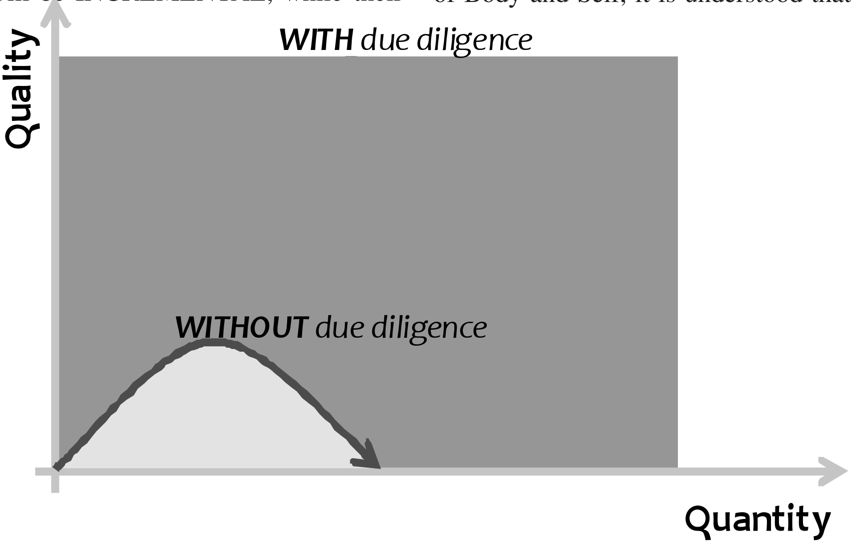


**Figure 13: Dual requirement of Quality and Quantity can be met only when Quality is enhanced**

the Body needs materialistic gains, and the Self needs NON- materialistic actions. And, happiness is the indicator of Harmony between these two. Human beings cannot compromise on any of the basic human values – money, spouse and conduct. In this regard, among the four Systems that exist in nature (i.e., Material System, Life System, Animal System, and Human System), the Human System is required to protect the other three systems – and it is not doing its bit yet… To help each individual reach this goal, teachers are needed, who can make the citizens to become responsible – at home the Parents, at school the Faculty Members, and in life society the Leaders. Technical Education System needs to build the second set consciously, but urgently...

Time has come to set the goals of the youth of India… But, before that, it is essential to set the goals of the policy makers of Technical Education System, the administrators of technical institutes & universities, the Faculty Members and the Staff Members, in line with a unified national development agenda. Such a large group of people can have a unified agenda with the central goal of nation building, only if

(1) Each of the individuals associated with technical education in India is groomed with Values and Ethics that permit and permeate a strong culture of giving in the technical institutes & universities… Employments in the line of technical education should be seen as Careers (as a way of life) rather than just as Jobs (as a way of earning a living).

(2) A considered policy change is effected to prepare the Next-Generation of Teachers in technical education, by rolling out a program to create additional 2,000 Faculty Members trained each year (in Ph.D. degree programs) at the best Technical Institutes & Universities worldwide.

(3) A shift is engineered from the teacher-centric teaching focused Input Based Technical Education System to the student-centric learning focused Outcome Based Technical Education System.

(4) The Technical Institutes & Universities in India are run professionally with merit alone in focus, and regaining dignity among the International community of peers in technology domains.

(5) Collect the existing limited federal pool of trained subject specialists to play a pivotal role in the nation building process on the technology domain.

## 13. THE CRITICAL LINK TO TRADITIONAL INDIAN EDUCATION SYSTEM

While many modern methods are available and have been successfully deployed in the context of organizing human beings to become more responsible in nation development, this is an excellent opportunity to bring back the Indian Method of Education – the Classical Traditional Texts provide valuable guidance on how this transition can be guided from the rather chaotic present, to an organized and respectful future. It is time for us to remember the expectation laid on humanity in the classical scriptures:

**Asato ma Sadgamaya**

Tamasoma Jyotirgamaya
Mrtyorma Amrutamgamaya–
Upanishads

Let untruth be replaced with truth. Let darkness give way to light. And, let death leave behind special contributions for the good of the mankind… Let all of us in academia put the good of the Institute or University before the Self, of the Nation before the Institute or University, and of the Mankind before the Nation.

An invaluable system of technical education (as described above) can be built only on a strong foundation of human Values and Ethics. Values in people who steer Technical Education

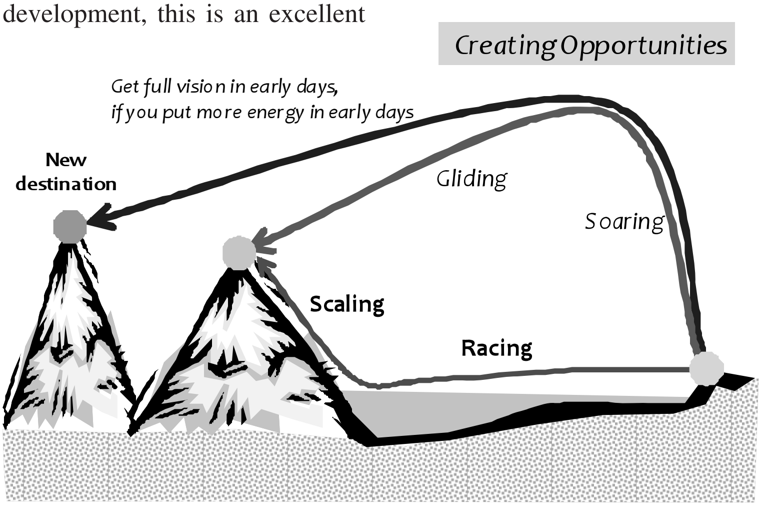


Figure 14: Academic Institutes & Universities need to establish such a system, which helps students soar high early in life for clear worldwide vision, and then glide smoothly in the rest of their life to their desired destination

is not a compulsion – it is the basis with which the entire effort, time and money spent will build a nation that will be self-reliant and vibrant. In effect, the Technical Institutes and Universities can be the lifeline of the nation.

It is imperative that Technical Institutes and Universities need to build a technical education system, which provides students with a full vision in the early days of their lives, that opens their horizons early enough in life – to know the world that they are embarking into, to recognise their desires, and to realize their dreams with ease (Figure 14).

**14. CLOSING COMMENTS…**

India has to build a competitive edge over other emerging economies with its strategic research outcomes, patented technologies, surge in innovation, high productivity of human resources, reduced cost of products, and high quality products and services, to ensure economic growth of India. Premier institutes of technology have the onus to shoulder responsibilities in this major national crusade; they have to take seriously this clarion call for recasting afresh the model of technical education... and make the graduates competent, but not just qualified.

The five actions suggested are needed urgently to build a self-reliant Technology Sensitive Nation. In particular, IITs can make a beginning by addressing Human Resource Development of Faculty Members to provide quality technical education in India and lead from the front:

(1) Launch a National Program of Technology Teacher Development;

(2) Start National Academy for Faculty Development and National Educational Leadership Institute;

(3) Implement Competence-based and Outcome-based Technical Education at IITs, NITs and Central Universities in association with Industry;

(4) Mandate each new IIT, NIT and Central University to select their limited technology tracks in which they wish to specialize from amongst the national technology grand challenges, and encourage Faculty Members to spend a 1-year sabbatical in the Industry within the first 10 years of their careers; and

(5) Agree to change the method of running professional Institutes, by carving and putting in place Professionally Governed Technical Education System with accountability and transparency in the investments made in these Institutes. ❑

(Director, I.I.T., Jodhpur)

# Learn the Lesson

The Ministry of Human Resource Development must be congratulated for steering India back to the Programme for International Student Assessment (PISA), which it had declined to participate in after a disastrous performance in 2009. PISA is a global evaluation of 15-year-olds conducted by the Organisation for Economic Cooperation and Development to gauge mathematical, scientific and reading skills of school students. Of the 74 nations participating, India was close to the bottom of the barrel. The UPA government had quit the field in high dudgeon, complaining about questions being set "out of context" in relation to the Indian socio-cultural milieu. Indeed, an Indian student may find it more comfortable to do sums using mangoes rather than avocados for units. But the argument can be taken only thus far, for the context of maths and science is the universe and its contents. Besides, a test involving European motifs which Indian students could not engage with should have been just as inscrutable to Mandarin readers. The phenomenal success of Shanghai's students suggests that the problem lies in India.

Anyway, PISA is not a contest. It is a research exercise generating data which can be compared across borders. Finishing last should not be read as losing face, but rather as an opportunity to improve teaching methods and school systems by intelligent comparison. If Singapore's systems work better, what prevents Indian school boards from emulating them? India lost out by boycotting PISA in 2012 and 2015, when Asian countries like China, South Korea and Singapore surged ahead. India need not have missed the bus, but the HRD ministry tried to change the benchmark to fit the country, rather than trying to change the country's teaching system to fit the benchmark.

While PISA is not a contest, it does have one competitive aspect: It is a reliable indicator of the future intellectual capital of participating countries. At one remove, it is a function of projected GDP, a reflection of the future wealth of nations. A country hoping to win the global GDP race should regard PISA as a target. And it should try to correct the structural imbalance that this test for schoolchildren draws attention to: India swears by universities and IITs, but it is happy to let primary and secondary schools, which form the bedrock of the education system, plod along with teaching methods that are decades old. The NDA government has done well to seek to return to PISA's global testing system. But the crucial reform still lies ahead: PISA data must be used to improve the school system.

# शिक्षक अगर ठान लें तो असंभव कुछ भी नहीं

उज्जैन के लसुड़िया चुवड़ गाँव में चार साल से किराए के कमरे में सरकारी स्कूल चल रहा है। यहाँ दिनेश कुमार जैन शिक्षक हैं। स्कूल की इमारत जर्जर थी। निर्माण के लिए शिक्षा विभाग को 12 बार पत्र लिखा तो स्कूल सील कर दिया गया। बच्चों के सामने शिक्षा पाने का संकट आ गया। उन्होंने किराए के मकान में स्कूल शुरू कर दिया। छह साल तक नए भवन की माँग भी करते रहे। विभाग ने परेशान होकर उनका तबादला कर दिया। जैन नई जगह जाने के बजाए हाईकोर्ट पहुँच गए। तबादला रद्द हो गया। अब गाँव में ही यह स्कूल नए भवन में लगेगा।

शिक्षक दिनेश कुमार जैन बताते हैं- जुलाई 2011 को मैं इस स्कूल में आया। 30 साल पुरानी इमारत में स्कूल चल रहा था। जर्जर हो गया था। ग्राम पंचायत से शिकायत की। उसने नए भवन के लिए कलेक्टर को प्रस्ताव भेज दिया, लेकिन जवाब नहीं आया। जुलाई 2012 में नया सत्र शुरू हुआ। चिंता बढ़ने लगी कि कहीं कोई हादसा हो जाए। शिक्षा विभाग को इसकी सूचना दी लेकिन दूसरा साल भी ऐसे ही निकल गया। एक दिन, मैं बच्चों को पढ़ा रहा था तभी अचानक छत के एक हिस्से का प्लास्टर गिर गया। कोई जख्मी नहीं हुआ, लेकिन बच्चों में खौफ बैठ गया। 16 जून 2013 से नया सत्र शुरू होना था।

इस बार जिला शिक्षा अधिकारी और जिला परियोजना समन्वयक को लिखा। इंजीनियर को जाँच के लिए भेजा गया। उसने भी इमारत को जर्जर पाया। 13 जून को स्कूल बंद करने का आदेश गया लेकिन यह नहीं बताया कि स्कूल कहाँ लगेगा? अफसरों ने भी इस सवाल का जवाब नहीं दिया तो 1000 रुपए महीना किराए पर एक कमरा लेकर स्कूल शुरू कर दिया। किराए के भुगतान के लिए प्रस्ताव विभाग को भेजता रहा लेकिन हर बार खारिज कर दिया गया। बच्चों की पढ़ाई रुके नहीं इसलिए मैं स्कूल चलाता रहा।

4 अक्टूबर 2014 के दिन मकान मालिक लाखन सिंह किराया लेने पर अड़ गया। कहने लगा- किराया दो या स्कूल बंद करो। उस दिन मैं हारा हुआ महसूस कर रहा था। मैंने भी कह दिया- बंद कर देता हूँ स्कूल। मैं टेबल से चश्मा उठाकर बाहर जाने के लिए पलटा, तभी पहली कक्षा की कुछ बच्चियाँ मेरे पास आकर कहने लगीं - सर, आपने गिनती लिखने को कहा था, लिख दीं, देखेंगे? यह सुनते ही मेर कदम जम गए। मैं मकान मालिक को देखने लगा। वह बिना कुछ कहे वहाँ से चला गया। जैन बताते हैं कि 20 जुलाई 2016 को किराए के कमरे में स्कूल चल रहा था, तभी जोर से धमाका हुआ। बाहर आया तो देखा कि जर्जर स्कूल की छत ढ़ह गई। खुश था कि किराए के कमरे ने 18 बच्चों की जान बचा ली।

वर्तमान जिला अधिकारी संजय गोयल कहते हैं कि जैन नियम के खिलाफ जाकर स्कूल चला रहे हैं, इसलिए किराया स्वीकृत नहीं हो सकता। वहीं ग्राम पंचायत के प्रभारी सचिव लाखन सिंह पिपावद का कहना है कि जैन के कारण ही गाँव में स्कूल चल रहा है। उनकी कोशिश के बाद ही विभाग ने नए आँगनबाड़ी केंद्र में यह स्कूल चलाने का निर्णय लिया। हालांकि अभी भी तीन साल से बाकी किराए के भुगतान के लिए जैन की लड़ाई जारी है।

जून, 2016 को मकान मालिक ने सीएम समाधान ऑनलाइन में शिकायत कर दी। विभाग में हड़कंप मच गया। शिकायत वापस करवाई गई। 18 जून को शिक्षक जैन का ट्रांसफर कर दिया लेकिन उनकी जगह कोई और नहीं लाया गया। इसलिए जैन हाईकोर्ट पहुँच गए। विभाग को तबादला रद्द करना पड़ा। ❑

## नौकरी के साथ कर्त्तव्यनिष्ठा

भादरा तहसील के जिगासरी बड़ी गाँव का सरकारी आदर्श उच्च माध्यमिक स्कूल सुबह 8:30 बजे से खुलता है तो रात 11 बजे बंद होता है। इस दौरान स्कूल स्टाफ बच्चों की अतिरिक्त कक्षाएँ लगाता है, ताकि इस बार बोर्ड परीक्षा में परिणाम शत-प्रतिशत रहे और बच्चे मेरिट में आएँ। स्कूल में सुबह 8:30 से 9:30 तथा शाम 4 से शाम 7 बजे तक अतिरिक्त कक्षाएँ लगाई जाती हैं। शाम 4 बजे से लगने वाली अतिरिक्त कक्षाओं में शाम 7 बजे तक छात्राओं को पढ़ाया जाता है। आधे घंटे के अंतराल के बाद रात 7:30 से रात 11 बजे तक छात्रों को पढ़ाया जाता है। स्कूल हॉल में छात्रों ने ही बिस्तर रजाइयों की व्यवस्था की है। प्रधानाध्यापक जयमलसिंह ने बताया कि गाँव पिछड़ा है। लोग बच्चों को स्वयं पढ़ा नहीं पाते हैं। पिछले वर्ष 10वीं बोर्ड का परीक्षा परिणाम 23 प्रतिशत रहा। अक्टूबर 2016 में उन्होंने प्रिंसिपल पद संभाला और स्टाफ के साथ मिलकर तय किया कि इस बार परिणाम शत-प्रतिशत रखना है। इसलिए यह कवायद की जा रही है।

स्कूल में भूगोल और गणित के अध्यापक नहीं हैं। प्राचार्य जयपालसिंह भूगोल अंग्रेजी एवं व्याख्याता हरिसिंह गणित विषय की तैयारी करा रहे हैं। ❑

# Set up grievance redressal system in all varsities : High Court

Observing that all colleges and universities in the country need to have a mechanism to redress grievances of students, the Delhi High Court directed the University Grants Commission (UGC) to set up such a system in all varsities within four months.

A bench of Chief Justice G Rohini and Justice Sangita Dhingra Sehgal said appointment of an 'ombudsman' in every university and a grievance redressal committee (GRC) for every college or group of colleges were "mandatory" and were provided for under the UGC (Grievance Redressal) Regulations of 2012. The court said failure of the universities to appoint ombudsman or to constitute GRC for colleges "would defeat the very object of grievance redressal mechanism provided under the regulations".

It also directed Delhi University (DU) to "take necessary steps forthwith and appoint the ombudsman" in terms of provisions of the regulations "as expeditiously as possible preferably within a period of four months from today". he court's ruling came while disposing of a PIL filed by a former law student, who had alleged non-compliance of the UGC regulations with regard to appointment of ombudsman by universities, particularly DU. As per the regulations, the ombudsman "shall be a part-time officer appointed for a period of three years or until he attains the age of 70 years, whichever is earlier", the bench noted in its judgement.

# HRD ministry forms sub-panel of CABE to boost girls' education

The Union HRD Ministry has constituted a sub-committee of Central Advisory Board of Education (CABE) at Hyderabad under Chairmanship of Telangana's Deputy Chief Minister to look into issues of girl's education.

The terms of reference of the sub-committee would be to examine the reasons for low participation of girls in education, including the socio-economic factors with resultant gender bias, and suggest ways to reduce gender disparity so as to achieve better gender parity index, an official release said here.

The sub-committee, to be chaired by Telangana's Deputy Chief Minister and Education Minister Kadiyam Srihari, would also assess the current status of girls' enrolment across the country at primary, upper. It will also examine the existing schemes, measures and incentives aimed at enhancing girls' participation and ensuring their retention in education and suggest improvements and modifications in the existing schemes.

The sub-committee will further look into the issues of safety of girl students in schools, particularly in residential schools and hostels. It will also identify infrastructure gaps such as non-availability and/or non-functionality of girls toilets which impede retention of girl students and compile best practices adopted by states/UTs for raising standards of girls education. he sub-committee shall hold consultations with the Central/state governments and other stakeholders and submit its report to the Union government within one year from the date of its constitution, the release added

# HRD to bring 'graded regulatory mechanism' in UGC : Javadekar

The HRD ministry will bring in a "graded regulatory mechanism" as part of key reforms in the University Grants Commission (UGC) to usher in greater transparency, freedom and autonomy, Union minister Prakash Javadekar said.

The HRD minister also announced that 'SWAYAM', an open web based platform from which 2000 courses will be run for students across the country, will be launched next month .

Referring to the Union Budget 2017, Javadekar said that it reflects the government's vision of raising quality in the education sector, which has got additional funds this time to the tune of Rs 6,000 crore. He said that as per the Right to Education Act, learning outcomes are being defined and will be part of the coming academic session.

Another initiative is an innovation fund of Rs 100 crore for schools which will be introduced in educationally backward districts, he said.

He said a separate exam agency has also been announced which will conduct major exams, many of which are being conducted by an "overburdened" CBSE, he said. The CBSE's main focus is to look after school education.

Speaking about UGC reforms, Javadekar said that thrust is to give more autonomy to good institutes and "monitor mid-level and monitor more those in the lower

# शैक्षिक महासंघ की राष्ट्रीय कार्यकारिणी बैठक तिरूपति में सम्पन्न

अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ की राष्ट्रीय कार्यकारिणी की बैठक 11 एवं 12 फरवरी, 2017 को तिरूपति (आन्ध्रप्रदेश) में सम्पन्न हुई। सम्बद्ध संगठनों द्वारा सम्पन्न विभिन्न कार्यक्रमों के सम्बन्ध में जानकारी प्रदान की और शाश्वत जीवन मूल्य-जनजागरण अभियान को और अधिक व्यापक बनाने का संकल्प लिया। शिक्षक सम्मान कार्यक्रम के सम्बन्ध में प्रो. अनिरूद्ध देशपाण्डे जी ने सभी का आह्वान करते हुए दो कार्य निष्ठापूर्वक सम्पन्न करने को कहा। प्रथम-असाधारण कार्य करने वाले शिक्षकों की खोज करना एवं उन्हें 'शिक्षा भूषण' सम्मान के लिए नामित करना और दूसरा प्रत्येक सदस्य से आवश्यक रूप से एक सौ रुपया अक्षय कोष के लिए एकत्रित करना।

महासंघ की कार्यवृद्धि की महत्ती आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए ऐसे अनुभवी कार्यकर्ता जिन्हें अपने पारिवारिक दायित्वों को पूरा करने के लिए अधिक समय देने की आवश्यकता नहीं है और जो संगठन की योजना से अन्यत्र रहकर पूरा समय देने की इच्छा रखते हैं उनसे पूर्णकालिक हेतु बातचीत कर स्वीकृति प्राप्त करने पर विचार किया गया। इसी प्रकार विस्तारक योजना लेने पर विचार किया गया। सभी से इस कार्य को प्राथमिकता से करने का आग्रह किया गया।

उच्च शिक्षा संवर्ग द्वारा प्रस्तावित 7 नये स्थानों पर राष्ट्रीय संगोष्ठियाँ आयोजित करने तथा अखिल भारतीय कार्यकर्ता सम्मेलन करने के प्रस्ताव को भी स्वीकार किया गया।

शिक्षकों की समस्याओं के समाधान के सम्बन्ध में दिये गये ज्ञापनों, सम्बद्ध संगठनों द्वारा सम्पन्न आन्दोलन कार्यक्रमों, मानव संसाधन विकास मंत्री महोदय से भेंटवार्ता, सातवें वेतन आयोग एवं यू.जी.सी. वेतन समिति को दिये गये ज्ञापनों एवं भेंटवार्ताओं की जानकारी के साथ सातवें वेतनमान आयोग की सिफारिशों को सम्पूर्ण देश में एक समान लागू करने, छठे वेतनमान की विसंगतियों को दूर करने तथा महासंघ के ज्ञापन में दी गई विद्यालय, महाविद्यालय एवं विश्वविद्यालय शिक्षकों की समस्याओं के समाधान के लिए सक्रिय प्रयास करने का निर्णय लिया गया।

समापन पर राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के अखिल भारतीय सम्पर्क प्रमुख प्रो. अनिरूद्ध देशपाण्डे जी ने अपने उद्‌बोधन में कहा कि हमारे मूल संगठन से चुम्बकीय शक्ति से प्रवत्त महासंघ एक अनोखा संगठन है जो राष्ट्रीय पुनर्निर्माण के लिए शिक्षा को केन्द्र मानकर कार्य कर रहा है। महासंघ से सम्बद्ध शिक्षकों ने अपने तत्त्व ज्ञान से नवीन प्रतिमान स्थापित करने का कार्य किया है। शिक्षा के क्षेत्र में सच दिखाने का कार्य महासंघ को करना है।

# देशीय अध्यापक परिषद, केरल ( NTU ) का 38 वाँ प्रदेश अधिवेशन कोझिक्कोड में सम्पन्न

अध्यापन राष्ट्र की सेवा के लिए, शिक्षा राष्ट्र की उन्नति के लिए आदि उद्‌घोष लगाते हुए केरल के सार्वजनिक शैक्षिक क्षेत्र में मार्गदर्शक बने देशीय अध्यापक परिषद् (एनटीयू) के 38वें राज्य स्तरीय सम्मेलन शैक्षिक क्षेत्र में क्रियात्मक चिंतन और विचारों की वेदिका बन गयी। कोझिकोड में 9 से 11 फरवरी 2017 तक चले सम्मेलन में प्रतिनिधि सम्मेलन, शैक्षिक संगोष्ठी, मित्र सम्मेलन आदि संपन्न हुए।

स्नेहांजली ओडिटोरियम में 10 फरवरी को हुए उद्‌घाटन समारोह में भाजपा केरल के पूर्व क्षेत्रीय संगठन मंत्री श्री पी.पी. मुकुंदन ने उद्‌घाटन किया। 'नये केरल की सृष्टि खड़ी करने में शिक्षकों का बहुत बड़ा हाथ है'। उन्होंने समारोह का उद्‌घाटन करते हुए कहा। देशीय अध्यापक परिषद् के राज्याध्यक्ष श्री के.एन. विनोद ने अध्यक्षता की। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ केरल के प्रांत कार्यवाह श्री गोपालनकुट्टी मास्टर ने मुख्य भाषण दिया। 'राजनैतिक प्रभाव से भरे केरल के शैक्षिक क्षेत्र में एनटीयू का आदर्श और प्रवर्तन आशा देने वाला है।' श्री नंपिडि नारायणन, टी.पी. राजन मास्टर, पी. सुनिल कुमार, एम. बालकृष्णन आदि ने आशीर्वाद भाषण दिये।

सेवानिवृत्त शिक्षकों के विदाई समारोह का उद्‌घाटन भारतीय मजदूर संघ के राज्य उपाध्यक्ष श्री गंगाधरन ने किया। टी. अनिल कुमार, ए. बालकृष्णन, अशोक बादुर, एम. शिवदास, के. रेवती आदि ने भी भाषण दिये। कोझिकोड के डी.डी.ई. डॉ. गिरीष चोलयिल को उपहार समर्पण किया। इसके बाद चले शैक्षिक समारोह का उद्‌घाटन श्री सी. सदानन्दन मास्टर ने किया। मुतलकुलम में चले सार्वजनिक सम्मेलन का भाजपा केरल के महासचिव श्री एम.टी. रमेश ने उद्‌घाटन किया। उन्होंने अपने उद्‌घाटन भाषण में कहा कि 'सात महिनों से चल रहे सी.पी.एम. के शासन ने केरल में असहिष्णुता भरी है।' समारोह में राज्याध्यक्ष के.एन. विनोद अध्यक्ष रहे। महामंत्री पी.एस. गोपकुमार, टी. अनूपकुमार आदि ने भाषण दिया।

तीन दिन चले सम्मेलन का समापन चिन्मया ओडिटोरियम में संपन्न हुआ। समापन समारोह का उद्‌घाटन भाजपा के देशीय निर्वाहक समिति के सदस्य श्री पी.के. कृष्णदास ने किया। टी.पी. जयचन्द्रन मास्टर अध्यक्ष रहे।

सम्मेलन में स्मरणिका का विमोचन भाजपा के प्रदेश महामंत्री श्री के. सुरेन्द्रन ने किया। अ.भा.रा.शैक्षिक महासंघ के केरल प्रदेश संगठन मंत्री मोहनकण्णन ने मुख्य भाषण दिया। पी.एस. गोपकुमार ने संगठन की रिपोर्ट प्रस्तुत की और एम.शिवदास ने आय-व्यय हिसाब प्रस्तुत किया।

मित्रता सम्मेलन का मशहूर साहित्यकार पी.आर. नाथन ने उद्‌घाटन किया। इस सम्मेलन में शैक्षिक क्षेत्र में नयी शिक्षा प्रणाली को लागू करना, उच्च माध्यमिक शिक्षा के क्षेत्र में उत्तर दायित्व निर्धारण करना, प्राथमिक कक्षा में संस्कृत का अध्ययन शुरू करना, शैक्षिक क्षेत्र के राजनीतिकरण आदि विषयों पर विस्तृत चर्चा हुई। इस अवसर पर प्रदेश कार्यकारिणी का गठन किया गया।

# A Seminar on "Demonetization and what next" was Organised

A seminar on "Demonetization and what next" was organised in the seminar hall of Aryabhatt college, DU by NSS unit of the college and Shaikshik Foundation on 3rd February, 2017. The keynote address was given by Sh. Surjit Dasgupta and Sh. Harshvardhan Tripathi. The college principal Dr. Manoj Sinha presided this event.

Sh. Dasgupta has highlighted the reasons due to which the present government brought this policy of demonetization and its futuristic benefits for the common person of this country. The second speaker Sh. Tripathi being a trained economist himself and worked as financial journalist for many years in continuation has highlighted its main benefits and suggested ways and means the government should do to complete this process. He mainly focused towards the next steps to be taken after demonetization. It was a well attended program for the students and the faculty. Several new developments came to the knowledge of the audience. The keynote addresses were followed by Q&A session by the students. Several students have asked variety of questions from the speakers. The seminar ended with the vote of thanks to the guests.

# UVAS State Conference Held at Kochi

The State Conference of UVAS ( Unnatha Vidhyabhyasa Adhyapak Sangh) Successfully conducted on 26-02-2017, Sunday at Kesav Smrithi, Aluva .

Dr. A. Ramachandran (Hon'ble Vice Chancellor of KUFOS, Kochi) inaugurated the function. Prof. J.P.Singhal (General Secretary, ABRSM) made the keynote address. Dr. C. K. Madhusoodhanan (President), Pro.V.Subash Kumar (General Secretary) and Sri.MohanaKannan were present. Two sessions were taken on the following topics.

1. National Educational Policy by Sri. A. Vinod.
2. Current problems in Higher Education and its Solutions by Dr.M.P.Ajitkumar.

The new State Executive members of UVAS for 2017-2018 were also selected.

# माध्यमिक शिक्षा में 'भारत बोध' विषय लागू होगा

मानव संसाधन विकास मंत्री प्रकाश जावडेकर ने इच्छा व्यक्त की है कि केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के कक्षा 9 व 10 के विद्यार्थियों के लिये विस्मृत भारतीय परम्पराओं के अनिवार्य अध्ययन की व्यवस्था के लिये प्रयास किये जाने चाहिये। उन्होंने कहा कि इससे विद्यार्थियों को भारत के स्वर्णिम अतीत को जानने में करने में मदद मिलेगी। जावडेकर भारतीय दार्शनिक सिद्धांतों, भारतीय नीति शास्त्र, खगोल शास्त्र, शिक्षा, नृत्य, संगीत, कृषि, दाम्पत्य जीवन तथा पर्यावरण संरक्षण की भारतीय परम्परा के अध्ययन पर जोर दे रहे हैं। सी.बी. एस. ई में कक्षा 11 एवं 12 के लिये वैकल्पिक विषय के रूप में 'भारत में ज्ञान परम्परा एवं आचरण' (नॉलिज, ट्रैडीशन एवं प्रैक्टिसेज) से ही उपलब्ध है। जावडेकर चाहते हैं कि इसे अनिवार्य कर दिया जाये तथा यह कक्षा 9 से ही शुरू हो जाना चाहिए। उन्होंने दिल्ली में 'भारत बोध' विषय पर आयोजित संगोष्ठी में कहा कि इस विषय की पुस्तक को अनिवार्य पाठ्य सामग्री के रूप में रखा जाना चाहिये, पूरक पुस्तक के रूप में नहीं। इस कॉन्फ्रेंस की मेजबानी भारतीय शिक्षण मंडल तथा इंदिरा गांधी खुला विश्वविद्यालय मिलकर कर रहे हैं। जावडेकर ने कहा: ''कुछ लोग प्रेम और सेवा का उपयोग, लोगों का धर्म परिवर्तन करके, उन्हें अपने धर्म में शामिल करने के लिये करते हैं, जबकि भारतीय सभ्यता तो आधारित ही विविधता एवं बहुलता पर है। यही हमारी पहचान है। विद्यार्थियों को इस बात की जानकारी मिलनी ही चाहिये कि हमारे पास क्या कुछ था तथा (आज) हमारे सामने क्या -क्या चुनौतियाँ हैं।'' उन्होंने इच्छा व्यक्त की कि सरकार - संपोषित संस्थाओं, जैसे 'भारतीय ऐतिहासिक शोध परिषद', 'भारतीय सामाजिक-विज्ञान शोध परिषद', 'भारतीय दार्शनिक शोध परिषद', 'भारतीय पुरातात्विक सर्वेक्षण' तथा 'इंदिरा गांधी कला केन्द्र' को भारत के अतीत के अध्ययन की दिशा में मिलकर कार्य करना चाहिये। राष्ट्रपति प्रणव मुखर्जी ने कहा कि भारत को सदैव ही ज्ञान एवं खोज का भंडार माना जाता रहा है। उन्होंने कहा, 'भारत विशाल विविधता का देश है। फिर भी इसके लोग एक तंत्र, एक ध्वज तथा एक संविधान के तहत रह रहे हैं। हम सब को भारतीय होने पर गर्व है तथा हम इस विविधता की कद्र करते हैं।